M.D. : जगदीश ताखर
✆ 9529142685

RAS

सिविल सेवा की तैयारी के लिए दिल्ली एवं राजस्थान की विख्यात टीम
अब एक मंच पर जयपुर में सिर्फ गीतांजलि में

अंतर्राष्ट्रीय संबंध

By : डॉ. योगेश शर्मा

यदि आप गुणवत्ता से समझौता नहीं करते हैं, तो गीतांजलि में आपका स्वागत है।

राजस्थान प्रशासनिक सेवा (मुख्य परीक्षा-2016)

गीतांजलि एकेडमी

ऑफिस : प्लॉट नं. 55, श्री गोपाल नगर, गोपालपुरा बाईपास, जयपुर – 9001789123
E-Mail : takharjagdish@gmail.com Web.: www.geetanjaliacademy.com

अन्तर्राष्ट्रीय संबंध

Class Notes by Dr. Yogesh Sharma

शीतयुद्धकालीन परिदृश्य – 1945 से 1990 तक	शीतयुद्धोत्तर परिदृश्य – 1990 से वर्तमान तक
1. द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर, 2. वैचारिक संघर्ष, 3. महाशक्तियों का रूपान्तरण, 4. तृतीय विश्व का उदय, 5. गुटनिरपेक्ष आंदोलन का प्रादुर्भाव, 6. सैनिक संगठनों / गठबंधनों / संधियों का विकास, 7. ब्रेटनवुड्स संस्थाओं का विकास, 8. निशस्त्रीकरण के प्रयास, 9. डॉलर साम्राज्यवाद का प्रारम्भ।	1. 1990 के पश्चात् प्रारम्भ, 2. शीतयुद्ध का समापन, 3. सोवियत संघ का विघटन, 4. एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था का उदय, 5. अमेरिका ही प्रमुख महाशक्ति, 6. पोस्ट ब्रेटनवुड्स, 7. गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह, 8. क्षेत्रीय आर्थिक संगठनों को प्रधानता, सहयोगात्मक क्षेत्रवाद पर बल। 9. आर्थिक एवं सांस्कृतिक कूटनीति को महत्व, 10. बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में रूपान्तरण। 11. वैश्विक मुद्दों में जटिलता।

कुछ प्रमुख शब्दावलियाँ :

वैश्वीकरण

वस्तुओं सेवाओं, पूंजी, तकनीक विचारों एवं संस्कृति का मुक्त प्रभाव ही वैश्वीकरण है।

उदारीकरण

एक राष्ट्र की घरेलू और वैदेशिक नीतियों तथा नियमों में शिथिलता और छूट देने की नीति ही उदारीकरण है।

शीतयुद्ध

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियत संघ और अमेरिका के मध्य का वैचारिक संघर्ष जिसमें सशस्त्र युद्ध का अभाव होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय संगठन

विभिन्न राष्ट्रों का एक सामूहिक प्रयास जिसका उद्देश्य वैश्विक हो और प्रभाव क्षेत्र भी वैश्विक ही है।

क्षेत्रीय संगठन

एक क्षेत्र विशेष के राष्ट्रों का संगठन जो क्षेत्रीय नीतियों को वैश्विक स्तर पर प्रचारित करे।

सैनिक संगठन

वे संगठन जिनका उद्देश्य राष्ट्रों की सैन्य क्षमता में वृद्धि और दूसरे राष्ट्रों का सैन्य विरोध (NATO)।

सामूहिक सुरक्षा

''एक सब के लिये तथा सब एक के लिये'' के सिद्धान्त पर आधारित ऐसी व्यवस्था जिसमें कुछ राष्ट्रों का समूह, संभावित खतरे का विरोध करता है।

विदेश नीति

एक राष्ट्र के हितों उद्देश्यों, मूल्यों का ऐसा समूह जिससे राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में अपना स्थान सुनिश्चित करता है।

भू–राजनीति

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीत के निर्धारण में भौगोलिक पक्षों यथा प्राकृतिक संसाधनों, स्थलाकृति, और जलवायवीय दशाओं का प्रभाव ही भू–राजनीति कहलाता है।

भू–अर्थनीति

एक राष्ट्र की विदेश नीति की निर्धारण में आर्थिक संसाधनों का प्रभाव जेसे वैश्वीकरण के युग में व्यापारिक उदारीकरण की नतियाँ।

भू–सामरिक/भू–रणनीतिक

एक राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा, सैन्यबल और तकनीकों का समन्वय ही भू–रणनीति कहलाता है।

भू–सांस्कृतिक

दो देशों के मध्य ऐतिहासिक संबंध, धर्म और दर्शन का प्रभाव, विदेश नीति पर होना ही भू–सांस्कृतिक पक्ष है।

भू–मनोवैज्ञानिक

एक राष्ट्र की विचारधारा, नेतृत्व एवं मनोबल का वैदेशिक संबंधों में प्रभाव ही भू–मनोवैज्ञानिक पक्ष है।

विभिन्न राष्ट्रों के राजनीतिक–सामाजिक–आर्थिक–सांस्कृतिक मनोवैज्ञानिक संबंधों का विश्लेषण ही अन्तर्राष्ट्रीय संबंध है।

शक्ति संतुलन

दो राष्ट्रों अथवा राष्ट्र समूहों के मध्य शक्ति का बराबर वितरित हो जाना जिसमें एक पक्ष दूसरे पर हावी ना हो सके।

एकध्रुवीयता

सम्पूर्ण वैश्विक शक्ति का किसी एक राष्ट्र अथवा महाशक्ति के इर्द–गिर्द केन्द्रित हो जाना, एकध्रुवीयता है। (1990 के दशक में अमेरिकी व्यवस्था)

द्विध्रुवीयता

वैश्विक शक्ति दो राष्ट्रों में केन्द्रिकृत हो जाना जिसमें प्रतिस्पर्धा और सहयोग दोनों देखे जाते हैं (1945 से 1990 तक का शीतयुद्ध)

बहुध्रुवीयता

शक्ति के दो से अधिक केन्द्र हो जाना और किसी एक राष्ट्र की प्रधानता के रूप में न रह जाना (वर्तमान विश्व)

कूटनीति

राष्ट्रहितों की प्राप्ति, संरक्षण एवं समवर्धन में किया जाने वाला कौशल का उपयोग ही कूटनीति है।

कूटनीति के ट्रैक

बदलते हुये वैश्विक परिदृश्य में राजनयिक, नागरिक, संचार माध्यमों, धार्मिक, व्यापारिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक आधारों पर कूटनीति का संचालन (ट्रैक–1 से ट्रैक–9 तक)।

GA GEETANJALI ACADEMY

संयुक्त राष्ट्र संघ

पूर्ववर्ती घटनाक्रम,
उद्देश्य एवं सिद्धान्त,
अंग : कार्यप्रणाली – संरचना,
उपलब्धियाँ एवं कमियाँ व सुधार,
भारत का संदर्भ

प्र.1 UNO के पूर्ववर्ती सम्मेलन (15 शब्द)

प्र.2 UNO के उद्देश्य व सिद्धान्त (50 शब्द)

प्र.3 UNO के विभिन्न अंगों का विवरण (50 व 200 शब्द)

प्र.4 UNO एक सफल संस्था के रूप में जाना जाता है लेकिन अभी भी कुछ कमियों से युक्त है। कथन को ध्यान में रखते हुए UN की उपलब्धियाँ एवं कमियां बताइये। (200 शब्द)

प्र.5 बदलते हुए वैश्विक परिदृश्य में UN में संस्थागत एवं प्रक्रियागत सुधार आवश्यक हैं। टिप्पणी करें। (200 शब्द)

प्र.6 UN में भारत की स्थायी सदस्यता के पक्ष और विपक्ष में तर्क प्रस्तुत करें। (200 शब्द)

उत्तर 1 – लंदन घोषणा (1941) : 1941 से प्रारम्भ होकर 1945 के सेन फ्रांसिस्को सम्मेलन तक (1942 – अटलांटिक चार्टर घोषणा, 1943 – मॉस्को व तेहरान सम्मेलन, 1944 – डम्बार्डन ऑक्स सम्मेलन, 1945 – माल्टा सम्मेलन, 1945 – सेन फ्रांसिस्को सम्मेलन)

उत्तर 2 – UN के चार्टर के अनु. 1 व दो 2 में इसके उद्देश्य व सिद्धान्त घोषित किये गये हैं जहाँ उद्देश्य में अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा, मानवीय स्वतंत्रताओं एवं अधिकारों का सम्मान, अंतर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान और सामूहिक निर्णय के आधार पर कार्य करना। वहीं सिद्धान्तो में सभी राष्ट्रों की समानता का सिद्धान्त, घरेलू क्षेत्राधिकार का सम्मान और सदस्य राष्ट्रों से अपेक्षा कि वे चार्टर में दिये गये दायित्वों का कुशलता से पालन करेंगे।

उत्तर 3 – UNO के अंग – (i) महासभा, (ii) सुरक्षा परिषद्, (iii) आर्थिक – सामाजिक परिषद्, (iv) अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय, (v) सचिवालय, (vi) न्यास परिषद्।

(i) **महासभा** – UN का सबसे बड़ा और लोकतान्त्रिक प्रकृति से युक्त अंग महासभा है जो 193 सदस्यों के साथ UN का प्रतिनिधित्व करता है तथा हर वर्ष एक अधिवेशन (सितम्बर) और कभी विशेष तथा आपातकालीन अधिवेशन के माध्यम से UN के उद्देश्य प्राप्त करने का प्रयास करता है। महासभा सभी राष्ट्रों को समान प्रतिनिधित्व देने के कारण और 3 नवम्बर 1950 को पारित शांति के लिए एकता प्रस्ताव के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के साथ UN में की जाने वाली नियुक्तियों, UN की एजेंसियों पर नियंत्रण व बजट प्रशासन के कार्य करता है, अतः महासभा सुरक्षा से लेकर कल्याण तक के सभी कार्य सम्पादित करती हैं।

(ii) **सुरक्षा परिषद्** – वैश्विक शांति की स्थापना व महाशक्तियों के एकीकृत दृष्टिकोण को बनाए रखने हेतु UN के सर्वाधिक शक्तिशाली अंग का नाम सुरक्षा परिषद् है। 5 स्थायी व 1 अस्थायी सदस्यों के साथ यह अंग निरन्तर सक्रिय रहता है (हर 14 दिन में सम्मेलन) और चार्टर में दिये गये विभिन्न उपायों क्रमश : वार्ता, मध्यस्थता, आर्थिक प्रतिबन्ध, सैन्य कार्यवाही के माध्यम से अपनी गतिविधियाँ संचालित करता है। सुरक्षा परिषद् की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसके स्थायी सदस्यों को प्राप्त वीटो पॉवर है जो अनेक बार UN के अंतर्गत विवाद का बिंदू भी घोषित किया जा चुका है अतः सुरक्षा परिषद् में निरंतर सुधार की मांग की जा रही है।

(iii) **आर्थिक : सामाजिक परिषद्** – इस अंग का मूल ध्येय यह है कि विश्व में संघर्ष के पीछे केवल राजनीतिक व सैन्य कारक ही जिम्मेदार नहीं होते हैं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समस्याएं भी संघर्षों को बढ़ावा देती हैं। अतः 54 सदस्यों वाले इस अंग काकार्य विश्व स्तर परनिर्धनता निवारण, भूख से मुक्ति/खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य के उच्च स्तरीय मापदण्ड जैसे कार्य करना है और इसीलिए यह परिषद् एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका व यूरोप के लिए विभिन्न आयोगों की सहायता से कार्य सम्पन्न करती है।

(iv) **अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय** – वैश्विक परिदृश्य में राष्ट्रों के मध्य कानूनी विवादों को न्यायिक–तकनीकी आधारों पर सुलझाने के उद्देश्य से अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय स्थापित किया गया जिसमें विश्व की सभी न्याय व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने के उद्देश्य से 15 न्यायाधीश नियुक्त किये जाते हैं और यह न्यायालय राष्ट्रों के पारस्परिक विवादों की सुनवाई के साथ अंतर्राष्ट्रीय कानूनों व संधियों की व्याख्या करता है तथा UN के विभिन्न अंगों को कानूनी मामलों पर परामर्श देता है।

(v) **सचिवालय** – UNO विश्व समुदाय का प्रतिनिधित्व करता है अतः एक वैश्विक संस्था के रूप में इसे बहुत से प्रशासनिक, वित्तीय, राजनीतिक और तकनीकी आधार पर निरीक्षण व नियंत्रण के कार्य करने होते हैं, जिन्हें सम्पन्न करने हेतु सचिवालय की स्थापना की गई है। सचिवालय का शीर्षस्थ अधिकारी – महासचिव है जो अपने ज्ञान व दूरदिर्शता से वैश्विक महत्व के मुद्दों पर विश्व समुदाय का ध्यान आकर्षित करता है। UN में महासचिव सचिवालय के माध्यम से पिछले 7 दशकों में अनेक महत्वपूर्ण कार्य करते आये हैं जिसके कारण UN के प्रति विश्व समुदाय आश्वस्त है। अतः UN को ''मानवता की आशा'' कहा जाता है।

(vi) **न्यास परिषद्** – यह अंग जो वर्तमान में UN का निष्क्रिय अंग है, इस उद्देश्य से बनाया गया था कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पराजित राष्ट्रों व उपनिवेशवाद से मुक्त होने वाले राष्ट्र अपने विकास, समृद्धि, लोकतान्त्रिक शासन के लिए UN में न्यास परिषद् के अंतर्गत प्रशिक्षित किये जायेंगे और जैसे ही ये राष्ट्र आत्मनिर्भर बनेंगे न्यास परिषद् का कार्य उन राष्ट्रों के सम्बन्ध में समाप्त हो जाएगा। इसीलिए वर्तमान समय में जब सभी राष्ट्र स्वतंत्र हो चुके हैं तो 1990 से (दशक से) न्यास परिषद् एक निष्क्रिय अंग के रूप में UN में विद्यमान है।

उत्तर 4 – उपलब्धियाँ : संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व में अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के दृष्टिकोण से स्थापित किया गया ऐसा संगठन है जिसके उद्देश्य पिछले सात दशकों में इतने व्यापक हो गये हैं कि यह संगठन विश्व समुदाय, मानवता एवं लोककल्याण का पर्याय बन गया है और इसकी उपलब्धि एवं सफलता का सबसे बड़ा प्रमाण ये है कि 51 राष्ट्रों की आरम्भिक सदस्यता से प्रारम्भ हुआ यह संगठन आज विश्व मानचित्र पर 193 राष्ट्रों के साथ बेहतर स्थिति में है।

UN की उपलब्धि का प्रथम प्रमाण 1945 से 1990 तक चले शीतयुद्ध को तीसरे विश्व युद्ध में परिवर्तित होने से रोकना रहा है साथ ही महाशक्तियों के वैचारिक संघर्ष को वैचारिक शिथिलता तक लाने में जिसका परिणाम शीतयुद्ध के समापन में निहित है, UN की एक बड़ी उपलब्धि में गिना जाता है।

UN की एक अन्य उपलब्धि यह रही है कि 1945 से 1960 की अवधि में एशिया, अफ्रीका व लेटिन अमेरिका (तीसरी दुनियाँ) के राष्ट्रों को उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद, रंगभेद एवं नस्लवाद के उत्पीड़न से ना केवल मुक्त कराया गया बल्कि UN में इन्हें स्थान दिलवाकर तीसरे विश्व को नवीन पहचान प्रदान की।

शीतयुद्ध के दौर में जब शस्त्रीकरण व परमाणु संकट चरम पर थे उस समय सशस्त्रीकरण व परमाणु अप्रसार के प्रयास जिनमें 1968 की NPT/अणुअप्रसार संधि के माध्यम से विश्व को परमाणुयुद्ध की संभावनाओं से बचाए रखा, यह UN की एक ओर उपलब्धि है।

UN के माध्यम से 1960 व 1970 के दशक को – विकास दशक घोषित किया गया, जिसका उद्देश्य था – विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों के मध्य संवाद की स्थापना और विकासशील राष्ट्रों का वास्तविक उत्थान जिसमें 1964 में अंकटाड (United Nations Conference on Trade and Development) की स्थापना व उत्तर–दक्षिण संवाद, दक्षिण–दक्षिण संवाद और 1974 में नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग विकासशील देशों के पक्ष में किया जाना भी UN की एक अन्य उपलब्धि रही है।

UN 1990 के दशक में वैश्वीकरण का गवाह है और इसने बदलते हुए वैश्विक परिदृश्य में न केवल स्वयं को समायोजित किया बल्कि अपने विभिन्न अंगों एवं अभिकरणों की कार्यशैली में सुधार के प्रयास भी इसी ने प्रारंभ किये हैं और इस दिशा में 1992 का "An Agenda for Peace" और 2005 का "An Agenda for further Reforms" शामिल है।

UN की उपलब्धि मानव कल्याणकारी कार्यों से भी जुड़ी है और वर्ष 2000 में ''सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (MDG) से प्रारंभ होकर 2015 के सतत् विकास लक्ष्य (SDG) और इनमें शामिल किये गए विभिन्न प्रकार के मानवतावादी कलयाणकारी कार्यक्रम UN की ऐसी उपलब्धि है जिसके कारण यह वैश्विक व्यवस्था सम्पूर्ण विश्व में मानवता की रक्षा

करने वाले संगठन का दर्जा प्राप्त कर चुकी है। स्पष्ट है कि भूतपूर्व महासचिव डॉग हेमरशॉल्ड ने UN के लिए 'मानवता की आशा' के जिस पदबन्ध का उपयोग किया है वह आज के दौर में सार्थक है।

कमियाँ – UN जिसे दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात विश्व के पुनर्निर्माण और स्थिरता युक्त विकास का लक्ष्य दिया गया था वह UN सात दशकों बाद न केवल इन लक्ष्यों की प्राप्ति में पिछड़ गया बल्कि नवीन प्रकार की चुनौतियों ने UN की कमजोरी को जगजाहिर कर दिया।

UN की सबसे बड़ी कमी महाशक्तियों के निरंकुश व्यवहार पर नियंत्रण ना रख पाना है एवं पिछले 7 दशकों में महाशक्तियाँ UN के मंच पर शक्ति के संतुलन और लोकतान्त्रिक प्रवृत्तियों के विकास को निरन्तर चुनौती प्रस्तुत करती आ रही हैं जिसके लिये स्थायी सदस्यों को प्राप्त वीटो UN की परेशानी का उदाहरण बन गया।

शीतयुद्ध के दौरान जो संघर्ष विद्यमान थे चाहे, अरब–इजरायल संघर्ष, कश्मीर समस्या, मध्य पूर्व में तेल संकट, अफगानिस्तान का संकट इत्यादि ये शीतयुद्धोत्तर काल में भी ना केवल विद्यमान हैं बल्कि इनकी तीव्रता में कुछ नये आयाम जुड़ जाने से यह समस्या ओर भी घातक हो गई है जो UN की बड़ी विफलता को सूचित करता है।

UN जिसे विकासशील राष्ट्रों की सामूहिक आवाज बनना था, वह विकासशील राष्ट्रों की समस्याओं एवं मतभेदों का समाधान कर पाने में असफल रहा व विश्व के एक बड़े हिस्से में विकासशील राष्ट्र न केवल आपस में संघर्षरत है बल्कि अनेक बार इन संघर्षों के समाधान हेतु ये राष्ट्र महाशक्तियों को आमंत्रण देते हैं जो इस बात का सूचक है कि विकासशील देश अभी भी UN की तुलना में महाशक्तियों को ज्यादा साधन सम्पन्न मानते हैं।

UN के बजट में महाशक्तियों एवं विकसित राष्ट्रों का आधिपत्य UN को इन राष्ट्रों पर निर्भर बनाता है साथ ही UN के पास स्वयं की सेना का अभाव एक ऐसी कमी है जिससे UN की क्षमता व विभिन्न अभियान निरन्तर प्रभावित होते रहे हैं।

सुधार के सुझाव

UN की संरचना में सुधार महती आवश्यक है, इसके लिये UN के चार्टर में आवश्यक संशोधन करने होंगे।

महासभा जो UN का सबसे बड़ा व महत्वपूर्ण अंग है उसमें आनुपातिक समानता का नियम लागू करना होगा व विभिन्न राष्ट्रों का महासभा में प्रतिनिधित्व उनके क्षेत्रफल, जनसंख्या, आर्थिक संसाधन, UN में किये गए योगदान और वैश्विक शांति में उनके द्वारा निभाई गई भूमिका के आधार पर दिया जाये।

सुरक्षा परिषद् जो महाशक्तियों की स्वार्थी/स्वार्थपूर्ण प्रतिद्वंदिता व वीटो के दुरूपयोग के कारण समस्याग्रस्त है, उसमें सुधार अपेक्षित है। इसके लिए G-4 (भारत, जापान, जर्मनी व ब्राजील) निरन्तर प्रयासरत हैं तथा 2005 सुरक्षा परिषद् में सुधार पर एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया था जिसमें सुरक्षा परिषद् की संख्या बढ़ाकर 24 किये जाने का सुझाव दिया गया था अतः आवश्यकता है कि सुरक्षा परिषद में नवीन सदस्यों का प्रवेश व वीटो के प्रयोग का लोकतान्त्रिकरण किया जाए और विश्वशान्ति व सुरक्षा के अतिरिक्त अन्य विषय जैसे निर्वाचन इत्यादि महासभा के कार्यक्षेत्र में रखे जायें।

UN को वित्तीय संसाधनों का स्वयं विकास करना होगा, इसके लिए UN आय के नये स्त्रोत सृजित करें जैसे, विभिन्न प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय व्यापारों, यात्राओं, सांस्कृतिक विरासत के स्थल व वैश्विक पर्यटन से लाभ लेने वाले राष्ट्रों की आय पर UN अतिरिक्त शुल्क लगा सकता है साथ ही UN अपनी विभिन्न एजेंसियों के कार्य में समन्वय स्थापित करके अपने कार्यालय खर्च में कटौती कर सकता है। विभिन्न देशों के शैक्षणिक पाठ्यक्रमों व अनुसंधानों में UN को अध्ययन का विंषय बनाकर इनसे मिलने वाला शुल्क भी UN की आय में वृद्धि कर सकेगा।

UN को अपनी एक स्थायी सेना का निर्माण करना होगा, साथ ही UN के नेतृत्व में विभिन्न देशों में कार्य कर रहे सैनिक और उनके विभिन्न खर्चों पर संबंधित देशों की सरकारों से आय प्राप्त करनी होगी।

UN के अन्तर्गत आर्थिक व सामाजिक परिषद् को और ज्यादा शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है जिसके कारण मानवीय कल्याण के विभिन्न कार्यक्रम विशिष्ट आधारों पर संचालित किये जा सकें और निर्धारित समय में तय किए गए लक्ष्य पूर्ण किए जा सकें।

भारत की स्थायी सदस्यता का संदर्भ

UN के सबसे शक्तिशाली अंग सुरक्षा परिषद् में सुधार का विषय विगत एक दशक से अत्यन्त विचारणीय रहा है और इसका सुधार इसकी सदस्यता के विस्तार में निहित है और भारत सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता का प्रबल दावेदार है जिसके लिये कुछ तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं –

1. भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतान्त्रिक देश व लोकतांत्रिक परिपक्वता का प्रतीक है जबकि सुरक्षा परिषद् अपनी संरचना एवं कार्यप्रणाली में गैर लोकतांत्रिक प्रवृत्तियों से युक्त है अतः भारत की लोकतांत्रिक सफलता सुरक्षा परिषद् के लोकतांत्रिकरण हेतु आवश्यकता शर्त है।
2. भारत सम्पूर्ण विश्व में अपने शांतिपूर्ण सहअस्तित्व एवं विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण राष्ट्र माना गया है और भारत की विदेश नीति तथा UN के उद्देश्यों में जो निकटता पाई गई है उस आधार पर भारत की स्थायी सदस्यता का दावा मजबूत है।
3. भारत विश्व भर में निशस्त्रीकरण, उपनिवेशवाद उन्मूलन व नस्लभेद का विरोधी रहा है तथा इसने UN के मंच पर तीसरी दुनियां के देशों की सामूहिक आवाज का प्रतिनिधित्व किया है अतः भारत की स्थायी सदस्यता तीसरे विश्व हेतु एक बड़ी सफलता होगी जिससे अब तक उपेक्षित रहा तीसरा विश्व वैश्विक मंच पर अपनी पहचान स्थापित कर सकेगा।
4. भारत विगत सात दशकों में एक वैश्विक, आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरा है और विभिन्न अध्ययनों में 2050 तक इसे तीसरी वैश्विक अर्थव्यवस्था का स्थान प्राप्त होने की उम्मीद है अतः वैश्विक आर्थिक संकटों के इस दौर में भारत को स्थायी सदस्यता मिलना UN के आर्थिक पक्ष को मजबूत करेगा।
5. भारत हमेशा UN के अंगों, अभिकरणों एवं शांति अभियानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता आया है व 7 बार सुरक्षा परिषद् का अस्थायी सदस्य रह चुका है अतः सुरक्षा परिषद में इसकी स्थायी सदस्यता व पिछले 7 दशकों के कार्यानुभव से सुरक्षा परिषद् सहित सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित हो सकेगा।
6. भारत को सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता मिलने से एशिया का शक्ति संतुलन जो अब तक केवल चीन के पक्ष में रहा है और जिसके कारण एशिया के विभिन्न भाग महाशक्तियों की प्रतिद्वंदिता के स्थलों के रूप में विकसित हो गए है ऐसे में भारत की स्थायी सदस्यता एशिया के शक्ति समीकरणों को संतुलित करेगी, इससे विभिन्न तनावों से मुक्ति मिल सकेगी।

विपक्ष में तर्क

UN की स्थापना के सात दशकों बाद भी भारत को स्थायी सदस्यता ना मिल पाना उन कमियों व चुनौतियों की ओर संकेत करता है जो विश्व परिदृश्य पर उपस्थित है –

1. भारत 7 दशकों बाद भी विकासशील राष्ट्र की श्रेणी में है जबकि सुरक्षा परिषद् में पाँचों स्थायी सदस्य राष्ट्र विकास के ऐसे मापदण्ड प्राप्त कर चुके हैं जो अभी भी भारत की पहुँच से बाहर हैं।
2. भारत वैश्विक महाशक्ति के स्थान पर अभी तक क्षेत्रीय महाशक्ति भी नहीं बन पाया है और एशिया के विशेषकर दक्षिण एशियाई राष्ट्रों से जो उसके निकट पड़ौसी हैं, भारत के संबंध निर्वावाद रूप से सौहार्द पूर्ण नहीं रहे हैं।
3. भारत आंतरिक राजनीति व प्रशासन के स्तर पर विभिन्न चुनौतियों जैसे मानवाधिकार हनन, आतंकवाद एवं भ्रष्टाचार से पीड़ित देश हैं अतः ऐसे में भारत जैसे राष्ट्र को जो आंतरिक रूप से समस्याग्रस्त है, स्थायी सदस्य बना लेना सुरक्षा परिषद् को किसी प्रकार मजबूती देगा, यह संदेहास्पद है।
4. भारत अभी तक अपनी विदेश नीति में निरंतरता नहीं ला पाया है और भारत की विदेश नीति आदर्श व यथार्थ के द्वंद्व में फंसी हुई है ऐसे में सुरक्षा परिषद् का रूझान इस बात पर कम है कि एक शिथिल एवं ढुलमुल विदेश नीति वाले राष्ट्र को सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता देने से किसी प्रकार का दीर्घावधिक लाभ हो पाएगा, यह संदिग्ध है।
5. सुरक्षा परिषद् में भारत की स्थायी सदस्यता पाँचों स्थायी सदस्यों के समर्थन पर निर्भर है जबकि वास्तविकता ये है कि USA व चीन विगत 7 दशकों में कभी भी भारत के निर्विवाद मित्र नहीं रहे हैं। चीन का भारत विरोध हाल ही में NSG में भारत के प्रवेश के संदर्भ में देखा गया है और अमेरिका से भारत की निकटता के कारण भारत का परम्परागत मित्र रूस इस विषय पर पूर्ण रूप से भारत के पक्ष में नहीं है।

6. भारत की स्थायी सदस्यता उस समय संदिग्ध हो जाती है जब अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की छवि एक soft power state रूप में देखी जाती है जबकि सुरक्षा परिषद् ऐसे राष्ट्रों की मांग करता है जो निर्णय लेने एवं उनके क्रियान्वयन में दृढ़ता का परिचय देते हों।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत की विदेश नीति

(1) सैद्धान्तिक परिदृश्य (उद्देश्य, निर्माणकारी तत्व, विशेषताएं : परम्परागत, समकालीन),

(2) व्यावहारिक परिदृश्य (पड़ौसी देशों का संदर्भ, महाशक्तियों का संदर्भ, संगठनों में भागीदारी)

प्र.1 भारतीय विदेश नीति के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए इसके निर्माणक तत्वों का उल्लेख करें।

प्र.2 भारतीय विदेश नीति की परम्परागत एवं समकालीन विशेषताएं बताइए।

प्र.3 भारतीय विदेश नीति में निरन्तरता एवं परिवर्तन के बिन्दुओं को इंगित कीजिए।

प्र.4 भारतीय विदेश–नीति में गुटनिरपेक्षता का अहम स्थान है लेकिन क्या अब भी यह (relevant) प्रासंगिक है?

प्र.5 द. एशिया के शक्ति संतुलन में भारतीय भूमिका का परीक्षण करते हुए चुनौतियाँ बताइये।

उत्तर 1 – भारतीय विदेश नीति के उद्देश्यों का विवेचन स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व ही किया जाने लगा था और संविधान के अनु. 51 में इन्हें स्थान दिया गया है जो इस प्रकार है –

1. अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा देना,
2. राष्ट्रों के मध्य न्यायपूर्ण संबंधों का विकास करना,
3. अंतर्राष्ट्रीय कानूनों व संधियों का पालन करना,
4. अंतरराष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण निपटारा करना।

भारतीय विदेश नीति इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये लगातार निर्मित एवं विकसित होती रही है जिसमें कुछ कारक महत्वपूर्ण हैं –

1. भू–राजनीति (भौगोलिक एवं प्राकृतिक दशायें),
2. भू–अर्थनीति (आर्थिक संसाधन),
3. भू–राजनीतिक (सैन्य तकनीकी पक्ष),
4. भू–सांस्कृतिक (धर्म एवं दर्शन),
5. भू–मनोवैज्ञानिक (इतिहास, विचारधारा एवं नेतृत्व),
6. राष्ट्रीय हित/राष्ट्रीय सुरक्षा,
7. आर्थिक विकास,
8. अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में स्थान (विदेश नीति के निर्धारण में महत्वपूर्ण),
9. घरेलु दबाव,
10. क्षेत्रीय दबाव,
11. वैश्विक दबाव।

1. **भू राजनीतिक तत्व** – भू–राजनीति का अर्थ है कि विदेश नीति के निर्धारण में भौगोलिक पक्ष क्या भूमिका निभाते हैं। भारत भौगोलिक दृष्टिकोण से एक उपमहाद्वीप की श्रेणी में आता है और संपूर्ण एशिया विशेषकर दक्षिण एशिया इसी उपमहाद्वीप का हिस्सा रहे हैं अतः भारत अपनी विदेश नीति में पड़ौस की भूमिका को सदा महत्व देता है और इसे 'पहले पड़ौस' का नाम दिया जाता है। भारत की भौगोलिक स्थिति उसे उत्तर में चीन व सोवियत संघ से निकटता देती हे, वहीं दक्षिण में हिन्द महासागर पश्चिमी शक्तियों के सैनिक व व्यापारिक रूचि के कारण महत्वपूर्ण हैं। अतः भारत अपने इस भू–राजनीतिक प्रभाव के कारण आजादी से अब तक गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन करता आया है।
2. **भू–अर्थनीति** – विदेश नीति के निर्माण में आर्थिक तत्व महत्वपूर्ण हैं और विशेषकर 1990 के दशक से जब से 'आर्थिक कूटनीति' का महत्व बढ़ा है व विभिन्न क्षेत्रीय आर्थिक संगठनों, मुक्त व्यापार समझौतों, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व बैंक की नीतियों तथा विश्व व्यापार संगठन का आर्थिक संदर्भ (व्यापारिक वार्ताओं) व व्यापारिक नीतियों

भारत की विदेश नीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, अतः भारत वर्तमान समय में 'मेक इन इंडिया' व 'स्मार्ट सिटी' जैसी परियोजनाओं हेतु विभिन्न राष्ट्रों के साथ निवेश संबंधी समझौते कर रहा है।

3. **भू–राजनीतिक/सामरिक** – भारत की विदेश नीति में उसकी सैनिक एवं तकनीकी क्षमता जो उसकी सुरक्षा दृष्टि से महत्वपूर्ण है, को ध्यान में रखते हुए भारत अपनी विदेश नीति में बेहतर सीमा प्रबंधन करता है साथ ही ये भू–सामरिक पक्ष जो इस समय चीन की 'String of Pearls/मोतियों की माला' रणनीति को ध्यान रखते हुए द. एशियाई देशों में संरचनात्मक विकास कर रहा है। इसी प्रकार भारत–अमेरिका–जापान का त्रिकोणीय/त्रिकोणात्मक संबंध सामरिक दृष्टिकोण से द. चीन सागर व पूर्वी चीन सागर में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है। इसी प्रकार 'चीन–पाक आर्थिक गलियारा' के पक्ष को ध्यान रखते हुए मध्य एशिया के देशों तक अपना प्रभाव पढ़ाने का प्रयास करता है।

4. **भू–सांस्कृतिक पक्ष** : भारत की विदेश नीति में सांस्कृतिक विरासत व विश्व के विभिन्न राष्ट्रों से भारत के सांस्कृतिक संबंध इस आधार पर महत्वपूर्ण है कि भारत किसी भी राष्ट्र के साथ संबंध निर्धारित करते समय इस पक्ष को महत्व देता है अतः भारत नेपाल व भूटान जैसे राष्ट्रों को सुविधाएं देता है। बंगलादेश के साथ सांस्कृतिक संबंध स्थापित करता है और विभिन्न देशों के साथ सांस्कृतिक कूटनीति के माध्यम से विभिन्न साहित्यकारों, कलाकारों एवं लेखकों का आदान–प्रदान व प्रवासी भारतीय दिवस का आयोजन करता है।

5. **भू–मनौवैज्ञानिक पक्ष** : इसके अंतर्गत एक देश का इतिहास, विचारधारा व नेतृत्व को शामिल किया जाता है। भारत की विदेश नीति में सामाजिक संस्कृति का विचार, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, जीयो और जीने दो का विचार तथा समय–समय पर विभिन्न नेतृत्व ने भारत को विदेश नीति के निर्माण में सहायता दी है। नेहरू से लेकर मोदी तक भारतीय विदेशी नीति में कई तत्व देखे गये हैं – नेहरू के नेतृत्व में भारतीय विदेश नीति में आदर्शवाद दिखा व पंचशील और NAM का प्रारंभ हुआ। इंदिरा गांधी के नेतृत्व में यथार्थवाद देखा गया और भारत परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बना एवं विदेश नीति में व्यावहारिकता देखी गई जिसका प्रमाण – गुटनिरपेक्ष होते हुए भी राष्ट्रहित के लिये सोवियत संघ के साथ 20 वर्षीय शांति मित्रता व सहयोग की संधि की गई। राजीव गांधी के नेतृत्व में विदेश नीति में सूचना तकनीक का समावेश हुआ, इसी क्रम में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में उनसे पूर्ववर्ती गुजराल सिद्धान्त का पालन करते हुए पड़ौसी राष्ट्रों को सुविधाएं दी गईं और एक बार पुनः परमाणु सम्पन्नता देखी गई। मनमोहन सिंह के नेतृत्व में विभिन्न देशों के साथ परमाणविक समझौते सम्पन्न हुए। साथ ही वैश्विक आंतकवाद जैसे विषय पर अमेरिका के साथ भारत के संबंध सौहार्दपूर्ण बनें। वर्तमान में नरेन्द्र मोदी का नेतृत्व 'फास्ट ट्रेक डिप्लोमेसी' पहले पड़ौस एवं 'Act East Policy' जैसे कार्यक्रमों में देखी जा रही है। साथ ही भारत की सुरक्षा परिषद् सहित विभिन्न क्षेत्रीय एवं महत्वपूर्ण प्रकार के संगठनों में भारत की सदस्यता का समर्थन जैसे SCO, MTCR इत्यादि विदेश नीति में स्थान प्राप्त कर चुके हैं।

भारत की विदेश नीति विशेषता –

परम्परागत	समकालीन : 1990 के बाद का परिदृश्य –
1. गुट निरपेक्षता,	1. UNO में स्थायी सदस्यता,
2. पंचशील,	2. द. एशियाई क्षेत्र का नेतृत्व करना,
3. तीसरी दुनियां को पहचान दिलाना,	3. क्षेत्रीय संगठनों से बेहतर संबंध बनाना,
4. निःशस्त्रीकरण का समर्थन	4. महाशक्तियों से संतुलन स्थापित करना,
	5. वैश्विक आतंकवाद का उन्मूलन,
	6. वैश्विक संकट के मुद्दों पर प्रभावी भूमिका निभाना – मानवाधिकार संरक्षण, ग्लोबल वॉर्मिंग, शरणार्थी संकट

गुटनिरपेक्षता – द्वितीय विश्व युद्धोत्तर परिदृश्य दो बड़े गुटों/दो बड़ी महाशक्तियों (पूंजीवादी बनाम साम्यवादी गुट) से वैचारिक एवं व्यावहारिक दूरी बनाए रखना ही गुटनिरपेक्षता है।

गुटनिरपेक्षता का भारतीय संदर्भ शीतयुद्ध के काल में दो महाशक्तियों के मध्य चल रहे संघर्ष में भारत के द्वारा अपनी स्वतंत्र पहचान व किसी एक गुट के साथ जुड़ने पर दूसरे गुट से मिलने वाली चुनौतियों का सामना करने से बचने के रूप में देखा गया। अतः गुटनिरपेक्षता को भारतीय विदेश नीति का आधारभूत तत्व माना जाता है।

भारत की गुटनिरपेक्षता का परीक्षण कुछ युद्धों में हुआ परन्तु भारत ने इसे बनाए रखा और 1971 में जब भारत ने सोवियत संघ के साथ 20 वर्षीय संधि पर हस्ताक्षर किये तो यह भारत की गुटनिरपेक्ष नीति को राष्ट्रीय हित के दृष्टिकोण से देखने का प्रयास था।

खालिस/असली गुटनिरपेक्षता – जनता पार्टी सरकार द्वारा घोषित, जिसका उद्देश्य था गुटनिरपेक्षता के सोवियत संघ के प्रति झुकाव को दूर करना।

90 के दशक में जब सम्पूर्ण विश्व एक गुटीय हो गया तो यह माना गया कि भारत हेतु अब गुटनिरपेक्षता का कोई महत्व नहीं रहा है। लेकिन भारत आज भी गुटनिरपेक्षता को प्रासंगिक मानता है और कुछ समय पूर्व भारत ने गुटनिरपेक्षता 2.0 लाकर भारत की व्यावहारिक आवश्यकताओं के अनुकूल विकसित करने का सुझाव प्रस्तुत किया। भारत के लिये गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता कुछ कारणों में निहित है – 1. एक ध्रुवीय विश्व में पूंजीवादी वर्चस्व को संतुलित करना, 2. वैश्वीकरण के प्रभावों से तीसरे विश्व का संरक्षण करना, 3. UNO की स्थायी सदस्यता में गुटनिरपेक्ष आंदोलन के 120 राष्ट्रों का भारत हेतु सकारात्मक पक्ष निर्मित करना, 4. वैश्विक संकट के नये मुद्दों को सुलझाने के लिये गुटनिरपेक्षता के कारण सम्पूर्ण विश्व से सहयोग प्राप्त कर सकना, चाहे मुद्दा वैश्विक आंतकवाद हो या ग्लोबल वॉर्मिंग।

पंचशील – 29 अप्रेल 1954 को भारत व चीन में पंचशील समझौता सम्पन्न हुआ – 1. प्रादेशिकता अखण्डता व संप्रभुता का सम्मान, 2. अनाक्रमण, 3. अहस्तक्षेप, 4. समानता एवं पारस्परिक लाभ, 5. शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व।

तीसरी दुनियां को पहचान दिलवाना – दूसरे महायुद्ध के पश्चात् एशिया, अफ्रीका व लेटिन अमेरिका के रूप में जो राष्ट्र साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद से मुक्त हुए उन्हें तृतीय विश्व कहा जाता है।

भारत स्वयं इन प्रवृत्तियों से पीड़ित रहने के कारण विश्व स्तर पर ना केवल उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद बल्कि रंगभेद और नस्लवाद का भी विरोध करता है और UN जैसे मंचों पर तीसरी दुनियां को वैश्विक मान्यता दिलाने के प्रयास करता है।

निशस्त्रीकरण का समर्थन – भारत परमाणु खतरों के युग में भी निशस्त्रीकरण का समर्थक है तथा इसमें किसी भी प्रकार के भेदभाव का विरोधी है।

भारत के द्वारा किये गये परमाणु परीक्षण का उद्देश्य शांतिपूर्ण है व भारत No First Use की नीति का समर्थक है। यद्यपि भारत ने NPT (1968) व CTBT (1996) पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं परन्तु भारत का तर्क यही है कि निशस्त्रीकरण भेदभाव विहीन होना चाहिए।

(निशस्त्रीकरण – इसका उद्देश्य शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा को दूर करते हुए शस्त्र विहीन व्यवस्था का निर्माण करना है जो एक आदर्श स्थिति है। शस्त्र नियंत्रण – यथार्थवादी होने के कारण यह जहाँ एक ओर नये शस्त्रों का उत्पादन रोकता है वहीं पूर्व के हथियारों में कटौती करना चाहता है। (शस्त्र नियंत्रण के मार्ग पर चलकर ही निशस्त्रीकरण का आदर्श प्राप्त किया जा सकता है)

समकालीन विदेश नीति के तत्व

UN में स्थायी सदस्यता – भारत की विदेश नीति में विगत दो दशकों से अधिक समय से UN में सुधार के साथ–साथ भारत को स्थायी सदस्यता दिया जाना शामिल है जिसके पीछे भारत की लोकतांत्रिक संस्कृति, शांति अभियानों में हिस्सेदारी, आर्थिक प्रगति एवं तीसरे विश्व में भारत की बड़ी पहचान मुख्य कारक है।

दक्षिण एशिया में नेतृत्व करना (द. एशिया में भारत की भूमिका) – द. एशिया की पहचान विश्व राजनीति में एक महत्वपूर्ण किन्तु विवादास्पद क्षेत्र की है जहां सार्क जैसा क्षेत्रीय संगठन और भारत के विभिन्न पड़ौसी द्विपक्षीय व बहुपक्षीय संबंधों में व्यस्त होने के साथ–साथ संघर्षरत भी हैं अतः इस क्षेत्र में भारत जो अपने विशालकाय भौगोलिक आकार व सांस्कृतिक जुड़ाव के कारण बड़े राष्ट्र की भूमिका में है, वह द. एशियाई देशों को नेतृतव देकर ना केवल 'पहले पड़ौस' की विदेश नीति को जारी रखना चाहता है वरन् द. एशिया को नेतृत्व देकर वैश्विक मंच पर अपनी मजबूत छवि प्रस्तुत करना चाहता है।

क्षेत्रीय संगठनों से संबंध – बदलते वैश्विक परिदृश्य में क्षेत्रीय संगठनों की भूमिका में वृद्धि हुई है और विभिन्न क्षेत्रीय संगठन आर्थिक, व्यावसायिक व तकनीकी आधारों पर निर्मित हुए हैं अतः भारत क्षेत्रीय संगठनों में अपनी प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज कराने हेतु निरंतर प्रयत्नशील है जिसका परिणाम सार्क, आसियान, बिम्सटेक, हिमतक्षेस, ब्रिक्स व SCO जैसे क्षेत्रीय संगठनों में भारत की निरंतर भागीदारी एवं इनके साथ भारत के समझौते उल्लेखनीय हैं।

महाशक्तियों से संतुलन – शीतयुद्धोत्तर परिदृश्य में भारत महाशक्तियों को ना केवल महत्व देता है वरन् विभिन्न महाशक्तियों के साथ द्विपक्षीय समझौतों एवं अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर उनके साथ जुड़कर एक संतुलन स्थापित करता हे, इसी का प्रभाव है कि शीतयुद्ध काल में महाशक्तियाँ भारत के प्रति जो संदेह रखती थीं वह संदेह अब सहयोग व विश्वास में परिवर्तित हो गया है जो भारत की एक बड़ी कूटनीतिक सफलता भी है।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत एवं दक्षिण एशिया
(पड़ौसी राष्ट्रों का संदर्भ)

निर्धारक तत्व –
1. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य,
2. भौगोलिक अवस्थिति,
3. विवाद के बिन्दु,
4. महाशक्तियों का संबंध।

प्र.1 द. एशिया के लिये भारत का महत्व (50 शब्द)

प्र.2 भारत के लिये द. एशिया का महत्व (50 शब्द)

उत्तर .1 – द. एशिया जो ऐतिहासिक व भौगोलिक आधारों पर भारतीय उपमहाद्वीप का हिस्सा है वह भारत को अपने सभी प्रकार के राजनीतिक, कूटनीतिक व आर्थिक संबंधों में केन्द्र मानता है क्योंकि इस क्षेत्र में भारत की विशालता, उसकी लोकतांत्रिक प्रकृति, आर्थिक विकास, महाशक्तियों के साथ संबंध व तीसरे विश्व का प्रतिनिधित्व कर पाने की भारत की क्षमता ऐसे कारक हैं जिनको द. एशिया में स्थित कोई भी राष्ट्र नहीं नकार सकता अतः प्रत्येक राष्ट्र भारत के साथ द्विपक्षीय आर्थिक, राजनयिक, सांस्कृतिक संबंध स्थापित करना चाहता है।

उत्तर .2 – भारत द. एशियाइ राष्ट्रों के साथ साझा इतिहास, साझी विरासत व साझी संस्कृति रखता है और द. एशियाइ राष्ट्रों के साथ भारत की भू–राजनीति इस प्रकार की है कि भारत के लिये अफगानिस्तान से नेपाल तक व पाक से बांग्लादेश तक प्रत्येक राष्ट्र महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त द. एशिया ही वह स्थल है जिसे अपनी विदेश नीति के केन्द्र में रखकर भारत जहाँ एक तरफ महाशक्तियों को प्रतिसंतुलित करता है वहीं दूसरी ओर द. एशिया में भारत का प्रभाव भारत की वैश्विक छवि को क्षेत्रीय शक्ति के रूप में व उभरती हुई महाशक्ति के रूप में सूचित करता है।

भारत पाक संबंध

भारत–पाक संबंधों को केवल राजनीतिक व सैनिक दृष्टिकोण से ही नहीं वरन् भावनात्मक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी समझने की आवश्यकता है क्योंकि दोनों राष्ट्रों का 1947 से पूर्व का इतिहास एक ही परिस्थिति व एक ही शैली का है।

दोनों देशों के संबंधों में परंपरागत रूप से विभाजन से उत्पन्न विवाद प्रधान है जिनमें कश्मीर विवाद, नदी जल बंटवारा, सीमा रेखा निर्धारण, शरणार्थी और अल्पसंख्यक समझौता तथा आर्थिक साधनों के वितरण का प्रश्न/पक्ष प्रमुख है। 1980 के दशक में शीतयुद्ध के दौरान पाक प्रायोजित आतंकवाद, सियाचिन ग्लेशियर विवाद (1984 से), महाशक्तियों के साथ पाक का सैन्य गठबंधन, कश्मीर मुद्दे का अंतर्राष्ट्रीयकरण ऐसे कुछ अन्य विवाद हैं।

भारत व पाक के मध्य शीतयुद्ध के प्रारंभिक दिनों में कश्मीर को लेकर जो विवाद उत्पन्न हुआ वह पाक द्वारा अमेरिका समर्थित सैनिक संगठनों का सदस्य बन जाने के कारण व शीतयुद्ध का प्रसार भारत की उत्तरी सीमाओं तक होने के कारण विवाद गंभीर हो गया।

यद्यपि इस दौर में 8 अप्रेल 1950 को "नेहरू–लियाकत अली समझौता" सम्पन्न हुआ जो दोनों देशों में अल्पसंख्यकों के जीवन व उनकी सम्पत्ति की सुरक्षा से संबंधित था। इसी प्रकार सिंधु नदी तंत्र के विभाजन, जिसमें सतलज, झेलम, रावी, व्यास व चिनाब शामिल हैं, को तकनीकी आधार पर सलझाया गया व विश्व बैंक की मध्यस्थता से 1960 में 'सिंधु जल समझौता' सम्पन्न हुआ जिसे विश्व की सबसे शांतिप्रद संधियों में से एक माना जाता है, यद्यपि पांच दशकों बाद भी विवाद उत्पन्न होते देखे जाते हैं।

1965 में 'सर क्रीक विवाद' उत्पन्न हुआ जो कच्छ के रण से संबंधित था जहाँ 96 कि.मी. लम्ब ज्वार नद मुख भारत–पाक के मध्य कच्छ और सिंध को पृथक करता है। इस क्षेत्र का पेट्रोलियम के अनुमानित भंडारों के कारण आर्थिक महत्व है परन्तु 1965 में इस विषय को विवादास्पद बनाकर दोनों पक्षों में युद्ध हुआ है एवं इसी समय अयूब खान द्वारा कश्मीर में 'ऑपरेशन–जिब्राल्टर' का संचालन किया गया जिसका उद्देश्य कश्मीर में स्थानीय मुस्लिमों को पाक के पक्ष में लाना था, लेकिन यह योजना असफल रही।

10 जनवरी 1966 को सोवियत संघ की मध्यस्थता से ताशकंद समझौता सम्पन्न हुआ जिसमें सीमा रेखाओं का सम्मान, युद्ध के पूर्व की स्थिति में पहुँचना, UN चार्टर का पालन व समझौतों को तीव्र करना शामिल थे।

कच्छ के रण पर लगातार चली वार्ताओं के बाद भी आवंटन (Allocation) सीमांकन, परिसीमन व प्रशासन का विषय विवादास्पद है तथा 26 नवम्बर 2008 को अरब सागर से प्रवेश किये गए आतंकियों द्वारा मुम्बई हमले के बाद यह क्षेत्र आंतरिक सुरक्षा के लिहाज से अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।

दोनों देशों में 1970 के दशक में पूर्वी पाक काप्रश्न उत्पन्न हुआ जो भौगोलिक व नृजातीय आधार पर पश्चिमी पाक की तुलना में भारत से निकटता रखता है, अतः 1970 के चुनावों में पूर्वी पाक में विद्यमान शेख मुजीबुर्रहमान की पार्टी अवामी लीग को प्राप्त बहुमत से आशंकित होकर प. पाक द्वारा चलाये गए दमन चक्र के कारण यह समस्या भारत–पाक संघर्ष में बदल गई क्योंकि भारी संख्या में शरणार्थी पूर्वी पाक से भारत की सीमाओं में प्रवेश कर गये, अतः 1971 का भारत पाक युद्ध, बांग्लादेश का निर्माण व 1972 का (3 जुलाई) शिमला समझौता इस परिप्रेक्ष्य में देखे जा सकते हैं।

शिमला समझौते से युद्ध विराम रेखा को – नियंत्रण रेखा (LOC) में बदल दिया गया व उसका अंतिम बिन्दु NJ 9842 पर निर्धारित किया गया व युद्ध बंदियों का अदान–प्रदान एवं नागरिक व संचार सेवाओं को बहाल करने पर समझौता हुआ।

1980 के दशक में इस क्षेत्र में एक नयी समस्या देखी गई जब अफगानिस्तान में सोवियत सैनिकों को अमेरिका व पाक के गठजोड़ द्वारा निकालने के लिये 'बीयर ट्रेप रणनीति' अपनाई गई और इस नीति की सफलता से उत्साहित होकर भारत में पंजाब व कश्मीर में जेहादी आतंकवाद प्रारम्भ किया गया और तब से अब तक दोनों देशों के संबंधों में कश्मीर व आतंकवाद ऐसे मुद्दे हैं जो इस सम्पूर्ण संबंध पर आच्छादित हैं।

1980 के दशक में सियाचिन ग्लेशियर का विवाद भी उत्पन्न हुआ क्योंकि 1972 (शिमला सम.) में निर्धारित LOC के अंतिम बिन्दु NJ 9842 से आगे की स्थिति अनिर्धारित है व यहाँ AGPL (Actual Ground Positioning Line/वास्तविक भू–अवस्थिति रेखा) अर्थात 'डी–फैक्टो' बॉर्डर की स्थिति विद्यमान है। पाक द्वारा इस क्षेत्र में अपना प्रभाव बढ़ाने हेतु भेजे गए सैन्य दलों के कारण भारत ने 1984 में 'ऑपरेशन मेघदूत' का संचालन किया और सियाचिन ग्लेशियर के सामरिक महत्व के कारण यह क्षेत्र भारत–पाक व चीन तीनों की रूचि का क्षेत्र है। लम्बे समय से इस क्षेत्र को विसैन्यकृत करने की मांग पाक द्वारा की जा रही है परन्तु भारत द्वारा 1999 की कारगिल घुसपैठ के कारण ऐसी स्थिति पर पाक को लेकर संदेह है।

भारत पाक संबंधों में नवीन परिवर्तन 2004 से देखा गया जब कम्पोजिट डायलॉग (समग्र वार्ता) का प्रारंभ हुआ जो 8 बिन्दुओं पर आधारित है –

1. कश्मीर,
2.सरक्रीक,
3. सियाचिन,
4. तुलबुल नोवहन,
5. आतंकवाद,
6. आर्थिक–वाणिज्यिक सहयोग,
7. मैत्रीपूर्ण आदान प्रदान,
8. शांति एवं सुरक्षा।

इससे पूर्व 90 के दशक से भारत व पाक के मध्य विश्वास बहाली के उपायों (CBM) पर चर्चा का प्रारंभ हुआ था और 1992 से परमाणु प्रतिष्ठानों की जानकारी के आदान प्रदान, 1996 में भारत के द्वारा पाक को दिया गया MFN का दर्जा शामिल थे। इसी दौर में भारत के द्वारा 'बस कूटनीति' (ट्रांसपोर्ट कूटनीति/राजनय) का प्रारंभ किया गया व लाहौर घोषणा पत्र में सभी प्रकार के आतंकवाद की निंदा एवं कश्मीर सहित विभिन्न विवादों पर द्विपक्षीय बातचीत का निर्धारण किया गया लेकिन 1999 के कारगिल संकट के कारण संबंधों में उग्रता आ गई।

पाक के सैन्य तख्तापलट व परवेज मुशर्रफ के साथ 2001 – आगरा शिखर वार्ता एवं 2003 में युद्ध विराम रेखा (LOC) पर संघर्ष विराम जैसी घटनाओं की पृष्ठभूमि में आर्थिक, व्यापारिक व सांस्कृतिक संबंध विकसित हुए लेकिन 2008 में मुंबई आतंकी हमले के पश्चात 'समग्र वार्ता' को स्थगित करदिया गया। लेकिन सुधारों की प्रक्रिया फिर प्रारंभ हुई और

विभिन्न क्षेत्रीय संगठनों जेसे सार्क, SCO तथा UNO में पारस्परिक वार्ताओं के कारण Track-1 कूटनीति की जगह Track-2 कूटनीति पर अधिक बल दिया जाने लगा।

कूटनीति के ट्रेक – दो राष्ट्रों के मध्य विवादों के समाधान व संबंध सुधार की दिशा में संघर्ष को टालने एवं सहयोग बढ़ाने वाले उपाय जो विभिन्न स्तरों पर किए जाते हैं उन्हें कूटनीति के मार्ग कहा जाता है। ये ट्रेक/मार्ग 1 से 9 तक होते हैं व कभी–कभी 1.5 (ट्रेक 1.5) भी सुना जाता है।

जहाँ Track-1 का संबंध सिर्फ राजनीतिक स्तर पर होने वाली वार्ता से है जिसमें राष्ट्राध्यक्ष व सरकारी प्रतिनिधि शामिल होते हैं वहीं Track-2 से Track-9 तक गैर सरकारी उपाय जैसे नागरिकों के आदान प्रदान, मीडिया की भागीदारी, कलाकारों – साहित्यकारों का आदान प्रदान, उद्योग संघों की आपसी बातचीत व धार्मिक प्रयत्न भी शामिल होते हैं। धार्मिक प्रयत्नों को आजकल दरगाह कूटनीति व Pilgrimage/पिलग्रिमेज कूटनीति भी कहते हैं।

इसी क्रम में भारत पाक संबंधों में कश्मीर व कश्मीर में चल रहा अलगाववादी आतंक चर्चित है जो विषय ना केवल तकनीकी रूप से 1947 के विभाजन से जुड़ा है बल्कि पिछले 7 दशकों में दोनों पक्षों की ओर से किये गए प्रयासों ने इस विषय को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित करने के साथ लोगों की भावनाओं से जोड़ दिया है।

पिछले कुछ समय में पाक में स्थिर व पूर्णकालिक सरकारें देखी जा रही हैं तथा निर्वाचित सरकार में सेना और कट्टरपंथ का प्रभाव कम होता प्रतीत होता है परन्तु कश्मीर में निरंतर आतंक के प्रसार व कश्मीर मुद्दे को मानवाधिकार हनन के मुद्दे से जोड़कर जो दुष्प्रचार किया गया है उसमें भारत को सैनिक, राजनीतिक व कूटनीतिक तीनों ही आयामों पर कार्य करने की आवश्यकता है। हाल की हिंसक घटनाओं व भारतीय सेना द्वारा की गई त्वरित कार्यवाही के पश्चात् दोनों देशों के संबंध एक बार फिर तनावपूर्ण हो गए हैं जहाँ भारत के द्वारा पाक पर दबाव बनाने के उद्देश्य से ना केवल सैन्य कार्यवाही बल्कि अब तक के सभी समझौतों की समीक्षा सिंधु जल समझौते (1960) का स्थगन, पाक प्रायोजित आतंकवाद को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में साबित करने के लिये विश्व में फैले प्रवासी भारतीयों से निरंतर सम्पर्क, पाक को MFN दर्जे पर पुनर्विचार और सार्क सम्मेलन को अन्य पड़ौसी राष्ट्रों के साथ स्थगनावस्था तक लाना, जिसका आयोजन पाक में प्रस्तावित था, ये सभी तत्व दोनों देशों के संबंधों में बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता दर्शाते हैं।

वर्तमान में भारत की पाक के प्रति विदेश नीति व भारत–पाक द्विपक्षीय संबंधों के समक्ष कुछ ऐसे परिदृश्य हैं जो चुनौतीपूर्ण हैं –

1. **कश्मीर मुद्दे पर भारत की आंतरिक व्यवस्था में विरोधाभास जो अनु. 370 की वैधता व प्रासंगिकता पर विचार करता है।**
2. **शीतयुद्ध के दिनों में अमेरिका–चीन–पाक के त्रिकोण का निर्मित होना व इस त्रिकोण के मूल में कई विषयों के साथ भारत विरोध का शामिल होना।**
3. **चीन व पाक की निर्विवाद मित्रता जो 1963 में काराकोरम राजमार्ग के निर्माण से लेकर, चीन पाक के मध्य आर्थिक गलियारे (46 अरब डालर) तक देखी गई है।**
4. **पाक द्वारा इस्लामिक देशों के संगठन (OIC) को धार्मिकता के आधार पर कश्मीर मुद्दे से जोड़ना।**
5. **भारत के परम्परागत मित्र रूस की पाक के प्रति बढ़ती हुई सहयोग की प्रवृत्ति जो चीन–पाक–सोवियत संघ धूरी निर्माण का संकेत है।**

इन चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए भारत–पाक संबंधों में नवीन प्रवृत्तियों का आ जाना स्वाभाविक है। जहाँ एक ओर भारत, पाक में निर्वाचित लोकतंत्र के पक्ष में हैं वहीं पाक प्रायोजित आतंकवाद से भारत की सुरक्षा चुनौतियों पर स्थायी समाधान प्राप्त करना चाहता है इसके लिये भारत मध्य एशिया के देशों से सहयोग बढ़ाने, बांग्लादेश के साथ सीमा विवाद सुलझाने व चीन–पाक गठजोड़ को ध्यान में रखते हुए अमेरिका व जापान के साथ संबंध बढ़ाने के बेहतर प्रयास कर रहा है साथ ही POK में भारत ने प्रति–आक्रमण करते हुए उस क्षेत्र में मानवाधिकार का मुद्दा व बलूचिस्तान में बलूच लोगों के समर्थन में अफगानिस्तान व यूरोप के देशों का ध्यान आकर्षित किया है जिसका दूरगामी परिणाम भारत के पक्ष में हो सकता है कि पाक, भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न कर पाये व साथ ही भारत के द्वारा वैश्विक मंच पर कूटनीतिक प्रयत्नों से अलग–थलग कर दिया जाये। यद्यपि भारत द्वारा सैन्य कार्यवाही किये जाने का विकल्प भी सुरक्षित है।

भारत–बांग्लादेश संबंध

भारत–बांग्लादेश संबंध सम्पूर्ण द. एशिया में भू–राजनीति के सभी पक्षों को सूचित करते हैं और चूंकि विभाजन कालीन परिदृश्य (1947) व बांग्लादेश के निर्माण का समय, ये दोनों ही बांग्लादेश को भारत से निकटवर्ती बनाते हैं अतः दोनों देशों के संबंध में द. एशिया सहित सम्पूर्ण अंतर्राष्ट्रीय व्यवहारों के लिये महत्वपूर्ण हैं।

1947 में भारत विभाजन के समय पूर्वी पाक के साथ सीमा रेखाओं का निर्धारण नहीं हुआ था और पूर्वी पाक की निकटता भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों से होने के कारण तथा पश्चिम पाक से सांस्कृतिक विभिन्नता व भौगोलिक दूरी इस बात का संकेत थे कि यह क्षेत्र भारतीय विदेश नीत हेतु अत्यंत महत्व का हैं और इसीलिए 1969 से 1971 तक चले घटनाक्रम में पश्चिम पाक में याहया खान और जुल्फिकार अली भुट्टो की सत्ता को पूर्वी पाक में आवामी लीग व शेख मुजीबुर्रहमान के प्रयासों से इस क्षेत्र में चुनौती प्राप्त हुई जिसका परिणाम 1971 के भारत–पाक युद्ध और बांग्लादेश के निर्माण से प्राप्त हुआ।

1971 में बांग्लादेश के निर्माण में भारत की भूमिका ने दोनों देशों के संबंधों को सौहार्दपूर्ण बना दिया जिसका प्रमाण था 19 मार्च 1972 को दोनों देशों के मध्य सम्पन्न ''25 वर्षीय शांति व मित्रता की संधि'' जिसका उद्देश्य था – एक दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप व अपनी जमीन का उपयोग एक–दूसरे राष्ट्र के विरूद्ध ना होने देना। इसी क्रम में 25 मार्च 1972 को दोनों देशों में आर्थिक समझौता सम्पन्न हुआ जिसमें यह घोषणा की गई कि दोनों देशों की सीमाओं के 16–16 कि.मी. भीतर तक मुक्त व्यापार की छूट/सुविधा प्राप्त होगी साथ ही सामान का भुगतान अपनी–अपनी मुद्रा में कर सकेंगे। इसी क्रम में गंगा नदी जल बंटवारे पर फरक्का समझौते और 1974 में दोनों देशों में भू–सीमांकन समझौता (LBA/Land Border Agreement) सम्पन्न हुआ जहाँ सीमा रेखा के निर्धारण के अभाव में भू–क्षेत्रों का आदान–प्रदान वार्ताओं से निर्धारित होना तय किया गया।

विवाद – 1975 में शेख मुजीब की हत्या व संबंधों में आये बदलाव के बाद भारत–बांग्लादेश संबंधों में उतार–चढ़ाव का दौर प्रारम्भ हुआ।

विवाद के मुख्य बिन्दु –

1. **सीमा संबंधी विवाद,**
2. **नदी जल बंटवारा,**
3. **अवैध घुसपैठ एवं तस्करी,**
4. **चकमा शरणार्थी,**
5. **तीन बीघा गलियारा,**
6. **बांग्लादेश का आंतरिक राजनीतिक घटनाक्रम,**
7. **उत्तर पूर्व राज्यों (भारत) के अलगाववाद से निकटता।**

भारत–बांग्लादेश 4096 किमी. लम्बी सीमा साझा करते हैं जो भारत के पाँच राज्यों – पश्चिम बंगाल, असम, मेघालय, त्रिपुरा व मिजोरम से संबंधित है। इसमें से लगभग 6.1 किमी. की सीमा रेखा पर सीमांकन नहीं हुआ है व साथ ही बांग्लादेश के साथ भारत की सीमा छिद्रदार (Porous) है जो नदियों व जंगलों से निर्मित होती है एवं दोनों देशों में विवाद का सृजन करती है। इस क्षेत्र में भारत के द्वारा की जाने वाली तारबंदी का बांग्लादेश सदा विरोध करता है।

दोनों देशों के मध्य 54 नदियाँ संबंधित है जिसमें 12 दिसम्बर 1996 को गंगानदी जल बंटवारे पर ऐतिहासिक जल समझौता सम्पन्न हुआ जो 30 वर्षीय है व इसमें हर 5 वर्ष बाद इसकी समीक्षा का प्रावधान है।

तीस्ता नदी जल विवाद अब भी विवादग्रस्त है क्योंकि इसमें पानी का बंटवारा किस अनुपात में हो, यह विशेष रूप से पं. बंगाल के विरोध के कारण अब तक नहीं सुलझा है साथ ही बांग्लादेश का यह तर्क कि भारत इन नदी जल समझौतों में बांग्लादेश में कृत्रिम बाढ़ व सूखे की परिस्थितियाँ निर्मित कर सकता है।

दोनों देशों में '3 बीघा गलियारा' एक मार्ग उपलब्ध करवाता है जो पं. बंगाल में स्थित है और भारत व बांग्लादेश में व्यापारिक आवागमन हेतु प्रयुक्त होता है।

दोनों देशों में हुए लीज समझौते के अंतर्गत भारत ने इस क्षेत्र को बांग्लादेश के लिये 24 घंटे का मार्ग उपलब्ध करवा दिया है जिसे लेकर स्थानीय समुदाय – कभी कभी विरोध करता है।

भारत–श्रीलंका

दोनों देशों के संबंधों में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सांस्कृतिक व्यवहार के साथ कुछ समस्यायें विद्यमान है जैसे – श्रीलंका की जातीय समस्या और भारत का संदर्भ, मछुआरा विवाद, पश्चिमी शक्तियों के लिये श्रीलंका का महत्व और श्रीलंका की चीन पर बढ़ती हुई निर्भरता से दक्षिणी एशिया और हिन्द महासागर क्षेत्र में भारत की भू–सामरिक स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव।

भारत श्रीलंका संबंधों में शीत युद्ध के दौरान 1950 के दशक से ही विवाद देखे गये हैं और श्रीलंका के मूल–निवासी अर्थात् सिंहली जो बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं, उनके प्रति श्रीलंका ने संरक्षण की जो नीति अपनाई है उसका दुष्प्रभाव श्रीलंका में रहने वाले भारतीय मूल के तमिलों पर दिखाई दिया है। 1954 में नेहरू–कोटले वाला समझौता, 1964 में शास्त्री–भंडार नायके समझौता के माध्यम से इस समस्या को सुलझाने के प्रयास किये गये लेकिन श्रीलंका के द्वारा बौद्ध धर्म को राष्ट्रीय धर्म घोषित करना, सिंहली भाषा की राजकीय भाषा घोषित करना और तमिलों को नागरिकता तथा मताधिकार से वंचित करना जैसे कार्यों से तमिल–सिंहली विवाद का जन्म हुआ।

श्रीलंका की सरकार द्वारा इस भेदभावपूर्ण नीति की कुछ कारण है जैसे – तमिलों के द्वारा सिंहलीयों के रोजगार पर अधिकार प्राप्त करना, तमिलों के द्वारा अपनी आय का एक बड़ा हिस्सा भारत में भेजना, तथा श्रीलंका का यह मनोवैज्ञानिक भय की तमिलों के समर्थन से भारत, श्रीलंका के उत्तरी और पूर्वी हिस्सों विशेषकर जाफना और किलीनोच्ची पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहता है।

1980 के दशक से तमिलों ने पहले तमिल यूनाईटेड लिबरेशन फ्रंट (तुल्फ TULF) के माध्यम से स्वायत्तता की मांग की वही कालान्तर में लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम के रूप में लिट्टे ने तमिलों के लिये पृथक राष्ट्र ईलम की मांग की। जिसके प्रतिउत्तर में श्रीलंका सरकार ने तमिल क्षेत्रों की आर्थिक नाकेबंदी कर दी जिसका प्रभाव दक्षिण भारतीय राज्यों की राजनीति पर दिखाई देना लगा। अतः भारत ने ''आपरेशन पवन'' और ऑपरेशन ईगल पूमलाई के माध्यम से तमिलों की सहायता के लिये आवश्यक सामग्रियां भेजी और इस प्रकार श्रीलंका की यह जातीय समस्या, भारत–श्रीलंका संबंध में विवाद का केन्द्र बन गई।

29 जुलाई 1987 को राजीव–जयवर्द्धने समझौता सम्पन्न हुआ और श्रीलंका में भारतीय सेना की मदद से उत्तरीपूर्वी क्षेत्रों में 48 से 72 घंटे के दौरान युद्ध–विराम, तमिल विद्रोहियों का आत्मसमर्पण और इसके पश्चात् भारत की निगरानी में श्रीलंका के उत्तरी और पूर्वी प्रांतीय परिषदों के चुनाव करना तय हुआ जिसके लिये श्रीलंका के संविधान में 13वां संशोधन किया गया। लेकिन श्रीलंका की कूटनीति के कारण भारत का यह शांति अभियान ना केवल असफल हुआ बल्कि लिट्टे ने भारत विरोद्धी को भी अपनी गतिविधियों में शामिल कर लिया।

वैश्विकरण के दौर में अमेरिका समर्थित नार्वे की मध्यस्था से श्रीलंका सरकार और लिट्टे में संघर्ष विराम हुआ लेकिन महिन्द्रा राजपक्षे के राष्ट्रपति बनने और सरत फोनसेंका के कुछ सैन्य नेतृत्व में 2009 में लिट्टे को समाप्त कर दिया गया लेकिन अभी भी तमिलों के उत्पीड़न के कारण यह समस्या मानवाधिकार हनन समस्या का रूप धारण कर चुकी है। जिसके अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् में श्रीलंका के विरूद्ध प्रस्ताव लाये गये और भारत की गलत कूटनीति ने भारत–श्रीलंका संबंध में नया विवाद उत्पन्न कर दिया।

मछुआरा विवाद

एक अन्य समस्या है जिसके मूल में हिन्द महासागर क्षेत्र में दोनों देशों के बीच सीमा निर्धारण की समस्या विद्यमान है। यद्यपि भारत ने 1974 में कच्छद्वीप टापू श्रीलंका को सौंप दिया है जिसमें यह तय हुआ है कि दोनों देशों के मछुआरे इस क्षेत्र के आस–पास अपना कार्य कर सकते हैं। लेकिन श्रीलंका में लम्बे समय तक चले जातीय संघर्ष के कारण श्रीलंका सरकार ने अपने देश के तमिल मछुआरों को इस क्षेत्र में आने से रोक दिया था और उनकी अनुपस्थिति में भारतीय मछुआरों ने इस क्षेत्र में अपनी गतिविधियां बढ़ा दी हैं। चूंकि अब संघर्ष समाप्त हो चुका है इसलिये श्रीलंका के मछुआरे इस क्षेत्र में भारतीय मछुआरों का विरोध करते हैं और श्रीलंका की नौ सेना द्वारा भारतीय मछुआरों को गिरफ्तार करने के कारण दोनों देशों के मध्य की जाने वाली वार्ताओं में यह विषय महत्वपूर्ण बना हुआ है।

एक अन्य विवाद श्रीलंका की हिन्द महासागर में महत्वपूर्ण स्थिति और महाशक्तियों का इस क्षेत्र में सक्रिय हस्तक्षेप जिसमें पहले अमेरिका और वर्तमान में चीन का संदर्भ विद्यमान है। अतः भारत के लिये अपनी महासागरीय कूटनीति को नवीन सिरे से रेखांकित करना होगा। 2015 में श्रीलंका के नेतृत्व परिवर्तन से भारत के पक्ष में सकारात्मक माहौल बनने लगा है। वर्तमान भारतीय नेतृतव के द्वारा भारत–श्रीलंका–मालद्वीप में त्रि–पक्षीय सामरिक फ्रेम वर्क पर कार्य किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत भारत–श्रीलंका के मध्य मुक्त व्यापार समझौते, असैन्य परमाणु समझौता, श्रीलंका के आर्थिक–सांस्कृतिक पुनर्निर्माण में भारत के द्वारा मदद जिसमें कोलम्बो–मटारा रेलवे लाईन का पुनर्निर्माण तथा श्रीलंका के कैंडी में बौद्ध संग्राहलय का निर्माण महत्वपूर्ण प्रयासों के रूप में शामिल है। साथ ही भारत सरकार श्रीलंका के संविधान में

किये गये 13वें संशोधन को पूर्णरूप से लागू करवाकर, श्रीलंका में उत्तरी और पूर्वी प्रान्तीय परिषदों को स्वायत्तता दिलाने के लिये प्रयासरत हैं। साथ ही श्रीलंका के मानवाधिकार विषय को भारत, श्रीलंका का आतंरिक संदर्भ घोषित कर चुका है जिसके परिणामस्वरूप दोनों देशों के संबंध वर्तमान में सहयोग पूर्ण स्तर पर पहुँच रहे हैं।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत और हिमालयी पड़ौसी

नेपाल और भूटान भारत की विदेश नीति में कई कारणों से महत्वपूर्ण रहे हैं –

1. ऐतिहासिक, सांस्कृतिक संबंध
2. भारत और चीन के मध्य बफर स्टेट
3. नेपाल और भूटान का स्थलरूद्ध देश होना
4. भारत के पूर्वोत्तर राज्यों के लिये महत्व।

भारत–नेपाल

नेपाल के संबंध में भारत की विदेश नीति 3 दृष्टिकोणों पर केन्द्रित है।

1. **नेपाल में शासन के किस तन्त्र को मान्यता दी जाये।**
2. **नेपाल में माओवाद के प्रभाव की किस प्रकार संतुलित किया जाये।**
3. **नेपाल से भारत के आर्थिक–सांस्कृतिक और कूटनीतिक हित किस प्रकार संबंधित किया जाए।**

भारत और नेपाल के संबंधों में परम्परागत स्वरूप नेपाल के राजतन्त्र को भारत के हिन्दू धर्म की मान्यताओं के अनुसार महत्व दिया जाता रहा है। वहीं दूसरी ओर भारत जो सम्पूर्ण विश्व में लोक तन्त्र का सफल प्रयोगकर्ता राष्ट्र है वह नेपाल समेत विभिन्न पड़ौसी देशों में लोकतन्त्र के निर्यात की बजाए, स्वयं के प्रयत्नों से लोकतन्त्र की स्थापना के लिये समर्थन करता है लेकिन नेपाल की भू–राजनीतिक स्थिति जो उसे भारत और चीन के मध्य एक बफर स्टेट का दर्जा देती है। 1990 के दशक से नेपाल में राजतन्त्र के विरूद्ध जो जन आंदोलन प्रारम्भ हुआ है उसमें लोकतान्त्रिक शक्तियों में चीन के माओवाद का हस्तक्षेप बढ़ गया है और विगत एक दशक से नेपाल में संवैधानिक संकट उत्पन्न हुआ है।

नेपाल के संवैधानिक संकट में राजतन्त्र से लोकतन्त्र की ओर रूपान्तरण, नेपाल के लिये नई संविधान सभा का गठन, हिन्दू राष्ट्र के स्थान पर नेपाल का धर्म–निरपेक्ष राष्ट्र घोषित होना, नेपाल में संघीय गणराज्य की स्थापना होना तथा नेपाल में भारतीय मूल के मधेशियों द्वारा अधिक राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग करना भारत और नेपाल के संबंधों को प्रभावित करने वाली मुख्य प्रवृत्तियाँ मानी जा सकती हैं।

नेपाल के संबंध में भारतीय विदेशनीति की तुलना में चीन की कूटनीति अधिक सफल रही है क्योंकि उसका आधार नेपाल का मनोवैज्ञानिक भयादोहन जो दो प्रकार से किया गया है प्रथम तिब्बत में चीन की सक्रिय गतिविधि ने नेपाल को संवेदनशील बिन्दु बना दिया है और दूसरी ओर सिक्किम के भारत में विलय और भारत से नेपाल में लोगों की आवाजाही को चीन के द्वारा भारतीय अतिक्रमण के रूप में दर्शाया गया है। जिसके परिणामस्वरूप नेपाल ने 1950 में भारत की साथ की गई शांती और मैत्री संधि का नवीनीकरण कर लिया है और भारत पर अपनी निर्भरता को कम कर लिया है।

भारत नेपाल संबंधों में आर्थिक पक्ष भी महत्वपूर्ण है क्योंकि विद्युत की उपलब्धता और भारत से नेपाल को पारगमन उपलब्ध होना। तथा चीन की तुलना में नेपाल की भारत से भौगोलिक नियंत्रण का लाभ भारत द्वारा लिया जा सकता है। लेकिन आवश्यकता है नेपाल के राजनैतिक घटनाक्रमों की भारतीय नीति निर्माता अनदेखा ना करें। साथ ही नेपाल के राजस्व में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले मधेसियों के साथ भारतीय नेतृत्व लगातार संवाद स्थापित करे और नेपाल के 2015 अपनाये गये संविधान और नेपाल में संघीय गणराज्य को उसके नये नेतृत्व के साथ भारत के द्वारा पर्याप्त आर्थिक सहायता, सांस्कृतिक संबंध, तथा सार्क, बिमस्टेट और बीबीआईएन नेटवर्कों के माध्यम से नेपाल तक यह संदेश पहुँचाये जाये कि नेपाल की राजनैतिक स्थिरता और आंतरिक सुरक्षा के लिये भारत का पक्ष सर्वाधिक महत्व है। इस श्रृंखला में बांग्लादेश तथा श्रीलंका के साथ भारत के द्वारा पारगमन दिये जाने से हिन्द महासागर के क्षेत्रों तक और वहां से मिलने वाले खनिज और ऊर्जा संसाधनों तक नेपाल को लाभान्वित करना भारतीय विदेश नीति में नेपाल के साथ संबंधों में लेकर सकारात्मक वातावरण तैयार कर पायेगा।

भारत–भूटान

भारत–भूटान के संबंधों में सम्पूर्ण द. एशिया में भूटान के साथ भारत के संबंध सौहार्दपूर्ण रहे हैं। ब्रिटिश शासन में भूटान के साथ अपनाई गई नीतियां, उसके उत्तराधिकारी के रूप में भारत ने ग्रहण कर लिये जिसका प्रमाण 1949 में भारत और भूटान के मध्य की गई संधि है।

भूटान के आर्थिक विकास में भारत ने सक्रिय सहायता पहुँचाई है। भूटान की पंचवर्षीय योजनायें भारत के सहयोग से संचालित होती है। साथ ही भूटान की शाही सेना को भारत में प्रशिक्षण दिया जाता है और भूटान की जल/पन विद्युत परियोजना जैसे ताला और चूखा भारत द्वारा ही संचालित है इसलिये दोनों देशों में प्रत्यक्षतः कोई विवाद नहीं रहा।

भूटान चूँकि बौद्ध धर्मावलम्बी राष्ट्र है इसलिये तिब्बत संकट के पश्चात् चीन इस क्षेत्र में अपना प्रभाव स्थापित नहीं कर पाया। 1970 के दशक में भारत के प्रयासों ने भूटान को अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का सदस्य बनवाया। भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों की सुरक्षा के लिये भूटान ने सदैव भारत का सहयोग किया है। 2003 में भारत और भूटान ने मिलकर उग्रवादियों के सफाया के लिये ऑपरेशन ऑल क्लियर का सफल संचालन किया।

भूटान के संबंध में एक महत्वपूर्ण दौर 2008 में आया है। जब भूटान के राजतन्त्र ने स्वेच्छा से लोकतन्त्र के पक्ष में सत्ता का हस्तान्तरण किया है साथ ही भारत भूटान संधि का नवीनीकरण किया गया है। लेकिन इसका उद्देश्य भारत का विरोध अथवा चीन को इस क्षेत्र में आमंत्रित करना नहीं है यद्यपि भूटान ने एक महत्वपूर्ण निर्णय में वहां कार्य कर रहे भारतीयों के लिये वर्क परमिट योजना को लागू किया है जिसका भारत द्वारा विरोध किया गया लेकिन वर्तमान सरकार की पहले पड़ोस की नीति में भूटान को व्यापक महत्व दिया गया है और वहां कुछ नई पन बिजली परियोजनाओं पर समझौते तथा भूटानी छात्रों को भारत में अध्ययन के लिये भारी भरक में छात्रवृत्ति तथा दोनों देशों के द्वारा सांस्कृतिक महोत्सव का आयोजन जैसे कार्यों से ट्रेक–टू जैसे उपायों से संबंधों में सुधार सतत रूप से जारी है।

भारत–अफगानिस्तान

अफगानिस्तान की भू–राजनैतिक स्थिति ने सम्पूर्ण 20वीं सदी में महाशक्तियों की रूचि का क्षेत्र बनाये रखा और शीतयुद्ध के अंतिम चरण अर्थात् 1980 के दशक में उत्पन्न हुये अफगान संकट (सोवियत संघ का अफगानिस्तान में हस्ताक्षेप) के कारण एशिया के शक्ति संबंधों में अफगानिस्तान का महत्व स्थापित हुआ।

1990 के दशक में सोवियत संघ के विघटन और अफगानिस्तान में तालिबानों का शासन पर अधिकार और 2001 में अफगानिस्तान स्थित अलकायदा आतंकी संगठन द्वारा अमेरिका के WTC पर किये गये हमले के पश्चात् अफगानिस्तान, वैश्विक आतंकवाद के संबंध में महत्वपूर्ण हो गया।

एक दशक से अधिक समय तक अफगानिस्तान में पश्चिम शक्तियों की उपस्थिति और नाटों का सैन्य बल विद्यमान रहा और इस सम्पूर्ण अवधि में अफगानिस्तान के विकास और पुनर्निर्माण में लिये कई प्रयास किये गये। अफगानिस्तान समस्या में कुछ महत्वपूर्ण पक्ष हैं जिनमें अमेरिका, चीन, सोवियत संघ के संदर्भ में भारत और पाक को जानना जरूरी है।

अमेरिका जो 2001 से अफगानिस्तान में अतिसक्रिय हुआ है उसका उद्देश्य अफगानिस्तान से उस आतंकवाद को समाप्त करना है जिसकी पृष्ठभूमि में स्वयं अमेरिका सहायता विद्यमान रही है। चीन विगत एक दशक से जिगेजियांग प्राप्त जो उसका पिछड़ा इलाका है। वहां मध्य एशिया से आतंकवाद का प्रसार हो रहा है। अतः अफगानिस्तान पर नियंत्रण के माध्यम से चीन मध्य एशिया के आतंकवाद से मुक्ति पा सकेगा। पाकिस्तान का अफगानिस्तान के साथ ऐतिहासिक संबंध है और परन्तु बलूचिस्तान तथा अफगानिस्तान में पाक की इस्लामिक परम्परा को स्थापित कर देना जो कि अफगानिस्तान की कबिलाई संस्कृति से अलग है और इसी क्रम में भारत का हित अफगानिस्तान में विकसित हुये आतंकवाद का समापन करने के समानान्तर मध्य एशिया के तेल और गैस भंडार तक पहुँच बढ़ाने के लिये अफगानिस्तान के साथ संबंध स्थापना आवश्यक है।

रूस जो अपने अतीत कालीन गौरव को पुनर्स्थापित करना चाहता है, जहां मध्य एशिया के गणराज्य उसी का भाग हुआ करते थे अतः अफगानिस्तान में रूस की दिलचस्पी अपने प्रतिष्ठित व्यवहार की स्थापना में सहायक होगी।

भारत अफगान संबंधों में भारत ने अफगानिस्तान के साथ सामरिक समझौता स्थापित किया है। साथ ही भारत में अफगानिस्तान पर 2012 में निवेश सम्मेलन आयोजित किया गया। इससे पूर्व अफगानिस्तान को सार्क का सदस्य बनवाया गया तथा अफगानिस्तान के आर्थिक विकास और पुनःनिर्माण के लिये मध्य एशिया तथा पाकिस्तान के साथ मिलकर प्रतिवर्ष ''हार्ट ऑफ एशिया सम्मेलन'' आयोजित होता है। भारत के द्वारा युद्धग्रस्त अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण के लिये भारी मात्रा में आर्थिक सहायता दी गई है तथा जेरांग–देलराम सड़क परियोजना, पुल–ए–खुमरी से काबूल तक ट्रांसमिशन लाईन, अफगानिस्तान के संसद भवन का निर्माण, हेरात प्रान्त में सलमा बांध परियोजना इत्यादि पर भारत के द्वारा सहायता पहुँच गई है।

अफगानिस्तान के प्रति भारत की नीति में कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु समाहित हैं –

1. **अफगानिस्तान की शक्ति शून्यता को भरने में महाशक्तियों की प्रतिस्पर्द्धा का ध्यान रखना।**

2. अफगानिस्तान के माध्यम से मध्य एशिया तथा ईरान के साथ अपने संबंधों में तीव्रता लाना जिससे संसाधनों पर लाभ मिल सके।
3. अफगानिस्तान में आतंकी शक्तियों के पुनरूत्थान पर नज़र रखना क्योंकि इसका सीधा प्रभाव भारत की सुरक्षा पर है।
4. अफगानिस्तान में पाक तथा चीन के समान हितों को ध्यान रखना ताकि अफगानिस्तान में चीन व पाक गठजोड़, जो भारत विरोध पर केन्द्रित हो। वह स्थापित न हो पाये।
5. एशिया के शक्ति संतुलन को अपने पक्ष में करने के लिये अफगानिस्तान के विकास और पुनः निर्माण में सहायता देना जिससे अफगानिस्तान का स्वाभाविक रूझान भारत को प्राप्त हो सके।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत और दक्षिण एशिया का पड़ौस

दक्षिण एशिया के संदर्भ में भारत की पड़ौस नीति का मूल्यांकन करते हुये चुनौतियों एवं संभावनाओं का विश्लेषण कीजिये।

दक्षिण एशिया जो मूलतः भारतीय उपमहाद्वीप से भौगोलिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक आधार पर अर्न्तसंबंधित है। इन राष्ट्रों के साथ भारत की विदेश नीति राजनैतिक आर्थिक, सामरिक, सांस्कृतिक, उद्देश्यों के आधार पर निर्धारित होती रही है और इसी का विश्लेषण आवश्यक है।

दक्षिण एशिया में भारत अपने लोकतांत्रिक कारक से पूर्वलाभ की स्थिति में है। दक्षिण एशिया के लिये लोकतान्त्रिक स्थिरता, शांति और विकास का एक श्रेष्ठतम उदाहरण है इसलिये भारत का प्रयास सम्पूर्ण दक्षिण एशिया विशेषकर पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान जैसे कट्टरपंथी राष्ट्रों में लोकतंत्र का विकास करना है वहीं नेपाल तथा भूटान जैसे राष्ट्रों में राजतन्त्र से लोकतन्त्र का रूपान्तरण भारत के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

दक्षिण एशिया के इन राष्ट्रों की सीमाएं भौगोलिक और मानवीय आधार पर भारत से संबंधित है इसलिये पड़ौस का सुरक्षा परिदृश्य भारत की विदेश नीति में सामरिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। इसलिये भारत जहां एक ओर दक्षिण एशिया में बाहरी शक्तियों के हस्तक्षेप का विरोधी है वहीं दूसरी ओर इन राष्ट्रों को साथ लेकर भारत ने क्षेत्रीय संगठनों में रूचि दिखाई है और सार्क जैसे संगठन के माध्यम से दक्षिण एशिया की शांति और स्थिरता तथा हिन्द महासागर क्षेत्र की सुरक्षा को बनाये रखने के लिये महासागरीय कूटनीति का निरन्तर विकास किया है।

दक्षिण एशिया में आर्थिक प्रगति का लक्ष्य प्राप्त करने के लिये भारत ने पड़ौसी राष्ट्रों को मुक्त व्यापार नीति (FTP), कराधान से छूट, तथा भारत के बन्दरगाह व्यापारिक पारगमन के लिये तथा उदार वीजा नीति और पसंदीदा राष्ट्र की घोषणा जैसे कार्य भी किये। इसी क्रम में भारत सांस्कृतिक संबंधों का विस्तार भी करता है। ट्रैक–2 तथा उससे आगे के उपायों, विदेशी कलाकारों के प्रोत्साहन, शैक्षणिक भ्रमण और छात्रवृत्तियाँ, पर्यटन परिपथ का निर्माण और सांस्कृतिक महोत्सव के आयोजन जैसी व्यवस्था करता है।

परन्तु इन सबके बावजूद भारतीय विदेश नीति दक्षिण एशिया के संबंध में अभी अपेक्षित पहचान और सफलता प्राप्त नहीं कर पाई है। ये राष्ट्र इस क्षेत्र में भारत की किसी भी भूमि को प्रभुत्ववादी और विस्तारवादी भूमिका के रूप में ग्रहण करते। साथ ही भारत पर मनोवैज्ञानिक भयादोहन का दोष रखते हैं। इस क्षेत्र में भारत की छवि को बिगब्रदर के रूप में घोषित किया जाता है।

विभिन्न पड़ौसी राष्ट्रों से भारत के द्विपक्षीय विवाद संवेदनशील अवस्था में है जिसके कारण विदेश नीति में गुट निरपेक्षता, शांतिपूर्ण सिद्धान्त और नेबर–फर्स्ट जैसे सिद्धान्त होते हुये भी सीमाविवाद, नदी जल विवाद, शरणार्थी और प्रवासी विवाद, प्रतिकुल व्यापार संतुलन तथा घुसपैठ और मानवाधिकार हनन के मुद्दे और भारत के प्रभाव को कम करने के लिये महाशक्तियों को इस क्षेत्र में आमंत्रित करना दक्षिण एशिया में भारतीय विदेश नीति के क्रियान्वयन में एक चुनौती पूर्ण परिदृश्य है।

अतः दक्षिण एशिया और भारत के अतीत कालीन संबंधों को विकसित हुये वर्तमान व्यवहार तथा भविष्य की आकांक्षाओं के मध्य एक संतुलन स्थापित करना ही भारतीय विदेश नीति का महत्वपूर्ण परिदृश्य है जिसके लिये आदर्शवाद और यथार्थवाद, सहयोग तथा संवाद, सहायता और पुनर्निर्माण के साथ भारतीय नीति–निर्माताओं को यह विशेषरूप से ध्यान रखना होगा कि दक्षिण एशिया में भारत द्विपक्षीय और बहुपक्षीय संबंध इस प्रकार निर्मित करे जो किसी देश के विरूद्ध प्रतीत ना हो, साथ ही महाशक्तियों के संदर्भ में पड़ौसी राष्ट्रों तक अपनी नीतियां और सहायता कार्यक्रम तीव्र गति से पहुँचा सकें जिसमें यह तत्व सदैव आधार का काम करें कि मित्रों में परिवर्तन संभव है लेकिन पड़ौस सदैव विद्यमान रहता है।

भारत एवं विश्व :

रूस, पश्चिमी एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, यूरोपीय संघ,

(शीतयुद्ध कालीन से शीतयुद्धोत्तर काल का घटनाक्रम)

1945 से लेकर अब तक सम्पूर्ण विश्व शीतयुद्ध और शीतयुद्ध घटनाक्रम से निर्धारित होता है। जहाँ तक तरफ अमेरिका और सोवियत संघ के रूप में दो बड़ी महाशक्तियां तथा उनके मध्य का वैचारिक संघर्ष तो दूसरी ओर इस संघर्ष का क्षेत्र बनने को तैयार यूरोप और एशिया इसलिये विश्व–राजनीति के सात दशकों में एशिया और यूरोप अमेरिका और सोवियत संघ के घटनाक्रम तथा भारत के साथ उनके संबंध का निर्धारण एक महत्वपूर्ण अध्ययन का विषय है।

सोवियत संघ जो 1990 के दशक से रूस के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है इस समय एक दुविधाग्रस्त राष्ट्र के रूप में अपने अतीत कालीन वैभव और वर्तमान के संदर्भों के बीच प्रयत्नशील हैं और अपनी विशेष भू–राजनीतिक एवं भू–सामरिक अवस्थिति के कारण यह राष्ट्र अभी भी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम प्रभावित कर देने की क्षमता रखता है।

भारत और सोवियत संघ के संबंधों में 1953 में स्टालिन की मृत्यु के पश्चात् महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये क्योंकि खुश्चेव ने 20वीं सोवियत कांग्रेस में विस्टालीकरण का नारा दिया तथा खुश्चेव की शांतिपूर्ण सह अस्तित्व की नीतियों से जहां साम्यवादी जगत में विभाजन दिखाई देने लगा वहीं दूसरी ओर भारतवर्ष तथा सोवियत संघ और चीन के सोवियत संघ के संबंध विवादग्रस्त होने लगे और भारत–सोवियत संघ संबंधों में सहयोग का प्रारंभ हुआ। यद्यपि 1964–65 में सोवियत संघ ने पाकिस्तान से भी संबंध बढ़ाने प्रारम्भ किये लेकिन इस समय तक चीन–पाक–अमेरिका गठबन्धन के निर्माण से सोवियत संघ का झुकाव भारत की ओर होने लगा। जिसका प्रमाण 1971 की 20 वर्षीय भारत सोवियत संघ शांति मित्रता और सहयोग की संधि है।

भारत–सोवियत संघ संबंधों में एशिया के घटनाक्रम का महत्वपूर्ण स्थान रहा है जहां पश्चिमी एशिया, मध्य एशिया, द. एशिया, द.पू. एशिया और पूर्वी एशिया में महाशक्तियों की प्रतिद्विन्दिता में भारत को सदैव प्रभावित किया है।

यदि द.पू. एशिया की बात की जाये तो 1954 में जेनेवा समझौते से हिन्द–चीन पर फ्रांस का प्रभाव समाप्त हो गया और यह क्षेत्र तीन भागों में विभाजित हो गया। वियतनाम, लाओस और कंबोडिया। इस क्षेत्र में साम्यवादी नेता हो–ची–मिन्ह का प्रभाव था और वियतनाम के दो भाग उत्तरी और द. 17^0 समानान्तर पर विभाजित किये गये तथा दोनों के मध्य संघर्ष प्रारम्भ हुआ और इसमें अमेरिका ने इस नीति पर कि साम्यवाद से जो कुछ बचाया जा सकता है बचा लिया जाये पर कार्य प्रारम्भ किया और वियतनाम के संघर्ष में अगले दो दशकों तक अमेरिका उलझा रहा और इस कारण द. पूर्वी एशिया राष्ट्रों में पूंजीवाद का विस्तार तेजी से हुआ जिसे 1967 में इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड, मलेशिया, फिलीपिन्स और सिंगापुर के माध्यम से आसियान के रूप में स्थापित किया गया। इस क्रम में अमेरिका और चीन दोनों के हित निहित है क्योंकि चीन इस क्षेत्र में द. चीन सागर और परम्परागत रूप से द्वीपों के विभाजन पर अधिकार जमाना चाहता है जबकि अमेरिका के लिये एशिया प्रशान्त क्षेत्र में अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करना आवश्यक है इसलिये शीतयुद्ध की सम्पूर्ण अवधि में आसियान/दक्षिण पूर्वी एशिया में सोवियत संघ लगभग अनुपस्थित रहा और चूंकि भारत–सोवियत संघ मैत्री इस युग की विशेषता है। इसलिये भारत भी 1990 के पूर्व तक इस क्षेत्र में प्रभावी नहीं हो सका।

भारत सोवियत संघ संबंधों में शीतयुद्ध का यूरोपीय घटनाक्रम भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मार्च, 1947 में अमेरिका द्वारा घोषित ट्रूमैन सिद्धान्त के माध्यम से यूरोप के राष्ट्रों को विशेष यूनान और मध्यपूर्व में टर्की को आर्थिक सहायता देकर साम्यवाद गुट में जाने से रोक दिया गया। कालान्तर में तुर्की अमेरिकी समर्थित NATO (नाटो) का सदस्य बना और इससे प. एशिया में अपना प्रभाव बढ़ाना प्रारम्भ किया इसी प्रकार मार्शल योजना के अन्तर्गत यूरोप के आर्थिक पुनर्निमाण का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। लेकिन इन योजनाओं के प्रतिउत्तर में स्टालिन ने कॉमिन फार्म अर्थात् कम्यूनिस्ट इन्फोरमेशन ब्यूरो का गठन किया और विश्व युद्ध के दौरान किये गये बाल्कन समझौते, याल्टा समझौता इत्यादि के माध्यम से पूर्वी यूरोप में जो प्रभाव हासिल किया था उसे बनाया रखा और 1955 में नाटो के प्रतिउत्तर में वारसा पैक्ट का निर्माण किया गया जिसमें हंगरी, रुमानियां, बल्गारिया, चेकोस्लावाकिया जैसे राष्ट्र शामिल हो गये। इस प्रकार सोवियत संघ का प्रभाव मध्य एशिया, पश्चिमी एशिया और पूर्वी यूरोप तक विस्तृत हो गया।

1956 में स्वजे नहर के राष्ट्रीयकरण के विषय पर फ्रांस, ब्रिटेन, और इजराइल ने मिस्र पर आक्रमण कर दिया। मध्य में मिस्र, अरब राष्ट्रवाद का प्रतिनिधि माना जाता है। क्योंकि मध्य पूर्व अथवा पश्चिमी एशिया ईसाई, यहूदी ओर इस्लाम तीनों के लिये महत्वपूर्ण है और ऐतिहासिक आधार पर फिलीस्तीन की लेकर अरब जगत (इस्लामिक दुनियां) तथा यहूदियों के मध्य संघर्ष विद्यमान रहा है और 1897 में विश्वभर के यहूदियों ने अपना संगठन बनाया तथा 1917 में वेलफोर घोषणा के अनतर्गत ब्रिटेन ने यहूदियों के राष्ट्रीय घर स्थापित करने का वचन दिया और इसी दौर में हिटलर के द्वारा

यहूदियों के उत्पीड़न से यहूदियों का प्रवासन फिलीस्तीन की ओर होने लगा तथा 1947 में महासभा ने फिलीस्तीन को अरबों और यहूदियों के मध्य विभाजित कर दिया। 1948 में इजराइल राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आ गया जिस पर मिस्र के नेतृत्व में अरब–इजराइल का पहला युद्ध हुआ और इजराइल की विजय से उसके प्रभाव में वृद्धि हुई तथा मध्य पूर्व में महाशक्तियों को आने का मौका मिला।

भारत ने 1950 में इजराइल को मान्यता दी परन्तु उसके साथ कूटनीतिक संबंध स्थापित नहीं किये क्योंकि अरब जगत के मुस्लिम देशों से विशेषकर ईराक, ईरान, तुर्की, सउदी अरब से भारत के ऐतिहासिक, धार्मिक–सांस्कृतिक संबंध तथा इण्डोनेशिया के पश्चात् विश्व की दूसरी सबसे बड़ी मुस्लिम आबादी भारत में निवास करती है ओर भारत का पंथ–निरपेक्ष स्वरूप उसे मुस्लिम जगत में महत्वपूर्ण स्थान दिलाता है।

1956 के स्वेज संकट के समय हुये दूसरे अरब–इजराइल युद्ध में अरब जगत में सोवियत संघ को अधिक महत्व प्राप्त हुआ जिसे रोकने के लिये 1957 में अमेरिकी राष्ट्रपति आइजनहॉवर ने सिद्धान्त घोषित किया और कहा गया कि मध्य पूर्व में किसी भी सोवियत संघ आक्रमण को रोकने के लिये अमेरिका सैनिक व आर्थिक सहायता प्रदान करेगा।

1960 में सोवियत संघ–अमेरिकी संबंधों में शांतीपूर्ण परिवर्तन प्रारम्भ हुये और अगले एक दशक तक इस क्षेत्र में बड़े परिवर्तन नहीं दिखाई दिये यद्यपि 1964 में फिलीस्तीन मुक्ति संघटन और हमास तथा अल–फतह जैसे आतंकी संगठन इस क्षेत्र में देखे गये और 1967 में अरब–इजरायल के मध्य ''6 दिन'' का निर्णायक युद्ध हुआ जिसमें इजरायल ने सिनाई प्रायद्वीप, गाजापट्टी, वेस्टबैक (प. किनारा), गोलन पहाड़ियां अपने अधिकार में ले ली जिससे फिलीस्तीन का अस्तित्व मृत प्रायः हो गया।

1970 के दशक में कुछ महत्वपूर्ण घटनाक्रम हुये जिनमें पहले चौथ अरब–इजरायल युद्ध और फिर 1973 में अरब राष्ट्र की एकजुटता से तेल संकट पैदा हुआ जहां पहली बार मध्य पूर्व का ऊर्जा संसाधन परिदृश्य महत्वपूर्ण बना। इस संकट को दूर करने के लिये पश्चिमी देशों ने कुछ महत्वपूर्ण प्रयास किये जिनमें उत्तर–दक्षिण संवाद (विकसित–विकासशील) को बढ़ावा तथा 1 मई 1974 को महासभा ने नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (NIEO) की स्थापना का नारा दिया गया। परन्तु 1980 के पूर्व ही पश्चिम एशिया व मध्य एशिया के घटनाक्रमों ने अर्थात् ईरान में इस्लामिक क्रान्ति, ईरान में अमेरिका के राजनायिकों को बंधक बना लेना, अफगानिस्तान सोवियत हस्तक्षेप तथा 1980 से 1988 के मध्य ईरान व ईराक में 8 वर्षीय युद्ध तथा इस क्षेत्र में आतंकवाद का प्रादुर्भाव 1978 में मिस्र द्वारा इजरायल से संबंध स्थापित करके अरब राष्ट्रवाद में नेतृत्व का संबंध जैसे कारण उत्पन्न हुआ। जिन्होंने पश्चिम एशिया को केवल भारत–सोवियत संघ संबंधों के दृष्टिकोण से नहीं वरन् वैश्विक घटनाक्रमों के आधार पर परिभाषित किया।

1990 के दशक में वैश्विक घटनाक्रम में परिवर्तन हुआ सोवियत संघ के विघटन के साथ ही मध्य एशिया तथा पश्चिम एशिया में इसका प्रभाव कम होने लगा इस समय भारत ने आर्थिक उदारीकरण का प्रारम्भ किया और जहां एक ओर पश्चिम एशिया में इजरायल के साथ संबंध स्थापित किये क्योंकि इजरायल कश्मीर मुद्दे और परमाणु परीक्षण मुद्दों पर सदैव भारत का समर्थन देता रहा है। वहीं दूसरी ओर भारत को रक्षा सामग्री की खरीद और अनुसंधान के लिये इजरायल से संबंध बढ़ाना जरूरी था।

इस बीच दक्षिण पूर्वी एशिया के संबंध में भारत ने ''पूर्व की ओर देखो नीति'' का प्रारम्भ किया और आसियान के क्षेत्रीय संवाद सहयोगी तथा पूर्ण वार्ताकार सहयोगी का दर्जा प्राप्त कर लिया। 2002 से भारत ने आसियान देशों के साथ शिखर सम्मेलन की भागीदारी प्रारम्भ की।

1990 से 2000 तक की अवधि में सोवियत संघ के उत्तराधिकारी रुस के साथ भारत के संबंध विशेषरुप से उल्लेखनीय नहीं रहे क्योंकि रुस आर्थिक और सैनिक दृष्टियों से स्वयं पश्चिमी शक्तियों पर निर्भर हो गया। लेकिन इस अवधि में रुस और चीन के संबंधों में सुधार होना प्रारम्भ हुआ वर्ष 2000 से भारत–रुस संबंधों में सुधार हुआ है और दोनों देशों ने सामरिक साझेदारी पर हस्ताक्षर किये हैं तथा 2010 में इसी साझेदारी को विशेष और विशेषाधिकारी प्राप्त साझेदारी के रूप में पुनः परिभाषित किया गया तथा वर्ष 2000 से लेकर अब तक प्रत्येक वर्ष दोनों राष्ट्रों की वार्षिक शिखर बैठक आयोजित होती है जिसमें वर्ष 2015 में 16वीं भारत–रूस शिखर बैठक में 16 समझौतों पर हस्ताक्षर हुये जिन्हें साझा–विश्वास, नये क्षितिज का नाम दिया गया।

वर्तमान में भारत–रुस संबंधों में रुस–चीन–भारत त्रिकोण की संभावनाये तथा विभिन्न संगठनों में भारत की सहभागिता का रुस द्वारा समर्थन जैसे – ब्रिक्स, एससीओ, जी–20, NSG इत्यादि। यद्यपि रुस के द्वारा भारत के पश्चिम देशों की ओर झुकाव विशेषकर अमेरिका व फ्रांस के साथ किये गये परमाणु समझौते, रक्षा उत्पादों की खरीद जैसे विषयों के कारण रुस–पाकिस्तान संबंधों में सुधार दिखाई दे रहा है लेकिन शीत–युद्ध काल के ऐतिहासिक संबंध, भारत के

कुडलकुलम के परमाणु–संयंत्रों में रुस की भागीदारी तथा रुस के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंध अभी भी दोनों देशों के संबंध में सकारात्मक विशेषताओं के रूप में विद्यमान है।

भारत–रूस सम्बन्धों का विश्लेषण शीत–युद्धोत्तर एवं 21वीं सदी किये जाने पर कुछ प्रमुख पक्ष विचारणीय है :

1. **रूस अपने ऐतिहासिक महाशक्ति जन्य गौरव को पुनः प्राप्त करना चाहता हैं**
2. **रूस–भारत सम्बन्ध, भारत–अमेरिकी सम्बन्धों से प्रतिकूल दिशा में प्रभावित हो सकते हैं, जिससे रूस की निकटता चीन पाकिस्तान के प्रति होने से शक्ति संतुलन में भारत का पक्ष कमजोर हो सकता है।**
3. **रूस के द्वारा पश्चिम एशिया और मध्य एशिया में अपनी स्थिति दोबारा दर्ज कराने पर इस क्षेत्र में नवीन प्रकार के शक्ति समीकरण स्थापित होंगे, क्योंकि "इस क्षेत्र में अमेरिका और रूस की प्रतिद्वन्द्वता शीतयुद्ध में रही है और साथ ही उत्तरशीतयुद्ध काल में इस क्षेत्र में चीन भी रूचि ले रहा है। अतः भारत के लिये इस क्षेत्र में कोई भी प्रतिक्रिया अमेरिका रूस और चीन के सन्दर्भ में ही की जा सकती है।**
4. **भारत के द्वारा शीतयुद्धोत्तर विश्व में पश्चिमी शक्तियों से आर्थिक एवं सामरिक निकटता जैसे कि अमेरिका फ्रांस और इजरायल से रक्षा सौदे के कारण रूस और भारत के सम्बन्धों में तनाव व्याप्त है। अतः इस दिशा में ट्रैक 1.5 कूटनीति का प्रयोग लाभकारी होगा।**

अन्ततः भारत–रूस सम्बद्ध परम्परागत मित्रता की कसौटी पर परखे हुये हैं और इसीलिये विश्व के नवीन द्विध्रुवीय एवं त्रिकोणात्मक सम्बन्धों में भी भारत–रूस सम्बन्ध निर्विवाद रूप से महत्वपूर्ण ळें

भारत पश्चिम एशिया

पश्चिम एशिया का वैश्विक मूल्य कुछ तत्वों पर आधारित है :

1. **पश्चिमी एशिया जिसे मध्यपूर्व, खाड़ी या अरब जगत का सन्दर्भ प्राप्त है, इसका ऐतिहासिक पक्ष।**
2. **यह क्षेत्र अपनी भू–राजनीतिक और भू–सामरिक अवस्थिति के कारण ना केवल इसके पड़ोसी राष्ट्रों वरन सुदूर पड़ोसी और महाशक्ति के लिये महत्वपूर्ण बना हुआ है।**
3. **पश्चिम एशिया धार्मिक और श्रेणी तंत्रीय समाजों में विद्यमान है, जहाँ इसाई, यहूदि ओर इस्लाम तथा इस्लाम की भी विभिन्न शाखायें अन्तर्ग्रस्त है।**
4. **यह क्षेत्र विश्वभर में अपने ऊर्जा संसाधनों के कारण विख्यात है।**
5. **यह क्षेत्र वर्ष 2010 के अरब स्प्रिग (अरब बसंत) के पश्चात् और भी महत्वपूर्ण हो गया, क्योंकि जहाँ एक और ट्यूनीशिया मिस्र और लीबिया जैसे राष्ट्रों में इसने परिवर्तन को सम्भव बनाय, वहीं सीरिया, तुर्की और ईराक की स्थितियाँ खराब हुई तथा ईरान और सऊदी अरब इस परिवर्तन से स्वयं को बचाये रख पाने से सफल रहे।**
6. **यह क्षेत्र शीतयुद्ध के दौर में अरब ईजरायल संघर्षों तथा अलफतेह और हमास जैसे गुटों का रणक्षेत्र रहा है और विगत एक दशक से भी कम समय में यहाँ इस्लामिक स्टेट ऑफ ईराक एण्ड सीरिया के रूप में नये प्रकार का भीषण आतंकवाद देखने को मिलता है।**
7. **पश्चिम एशिया का एक अन्य सन्दर्भ इस्लामी जगत के खोये हुये वैभव को प्राप्त करना, इसे नेतृत्व प्रदान करना और तथाकथित सभ्यताओं के संघर्ष के रूप में घोषित किये गये क्षेत्र को महत्वपूर्ण परिणामों तक पहुँचाना।**
8. **भारतीय सन्दर्भ में पश्चिमी एशिया इस कारण भी महत्वपूर्ण है कि भारत में विश्व की दूसरी सबसे बड़ी मुस्लिम आबादी का निवास तथा भारत का पंथनिरपेक्ष चरित्र, पश्चिमी एशिया में भारतीय श्रमिकों की उपस्थिति और ऊर्जा संसाधनों पर भारत की निर्भरता मुख्य तत्व है।**

भारतीय विदेश नीति का समग्र मूल्यांकन करते हुये इसके समक्ष संभावना एवं चुनौतियों का विवरण प्रस्तुत कीजिये।

भारतीय विदेश नीति एक गत्यात्मक विषय के रूप में राष्ट्र के दृष्टिकोण को आदर्शवाद तथा यथार्थवाद के मध्य संतुलित करती हुई पिछले सात दशकों में असीम संभावनाओं को यथार्थ करती आई हैं और आज भी कुछ चुनौतियां विद्यमान है।

भारतीय विदेश नीति अपने भू–राजनीतिक और भू सामरिक दृष्टिकोण को शीतयुद्धकालीन वातावरण में ध्यान रखते हुये विकसित हुई और पड़ौस तथा महाशक्तियाँ दोनों के ही संबंध में इसने गुट निरपेक्षता, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, विवादों के शांतीपूर्ण समाधान द्विपक्षीय समझौतों को महत्व दिया लेकिन राष्ट्रीय सुरक्षा का दृष्टिकोण सर्वोपरि रखा इसलिये एन.पी. टी. (परमाणु अप्रसार) तथा निशस्त्रीकरण का समर्थक होते हुये भी स्वयं को परमाणु शक्ति से सम्पन्न किया तथा

महाशक्तियों से समान व्यवहार रखते हुये एशिया के भू–सामरिक संतुलन का ध्यान रखते हुये अमेरिका–भारत–चीन के त्रिकोण के प्रतिउत्तर में भारत–सोवियत मैत्री को विस्तृत आधार प्रदान किया।

भारतीय विदेश नीति शीत युद्धोत्तर विश्व में गुणात्मक दृष्टि से परिवर्तित हुई और राजनैतिक संबंधों के साथ आर्थिक–सांस्कृतिक सरोकर इसमें प्रधान हो गये हैं और भारत में संतुलित दृष्टि का परिचय देते हुये ''लुक ईस्ट पॉलिसी'' से ''एक्ट ईस्ट पॉलिसी'' तक द.पू. एशिया, पूर्वी एशिया और यहां तक कि आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड जैसे देशों से भी बहुपक्षीय संबंध स्थापित किये हैं जिसके कारण भारत इस क्षेत्र में विकसित हो रहे मुक्त व्यापार क्षेत्रों तथा सामरिक क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है जिसमें नौ सैनिक अभ्यास, परमाणु समझौते ऊर्जा समझौते जैसे क्षेत्रों में कार्य हुआ है साथ ही आसियान देशों के साथ भारत के वार्षिक शिखर सम्मेलन और आसियान–आर्थिक समुदाय तथा इन देशों के साथ द्विपक्षीय समझौते, भारत–म्यांन्मार–थाईलैण्ड तक राजमार्ग का निर्माण, दिल्ली–वियतनाम रेल सेवा का विस्तार जैसे प्रयासों ने भारत की आतंरिक सुरक्षा में उ.पू. राज्यों को आसियान के साथ संबंधित कर दिया है।

भारतीय विदेश नीति में प. एशिया का संदर्भ अतिमहत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि इस क्षेत्र के साथ भारत का आर्थिक और सांस्कृतिक जुड़ाव है तथा इस क्षेत्र में भारत की भू–अर्थनीति भारत को इस बात के लिये प्रेरित करती है कि भारत प. एशिया के ऊर्जा संसाधनों तक अपनी पहुँच बढ़ाये इसलिये इन देशों से भारत पश्चिम की ओर देखो Look West नीति का पालन कर रहा है साथ ही प. एशिया के आतंकवाद और गृहयुद्ध में भारत मानवीय आधार पर सहायता का समर्थक है। इसलिये जहां एक ओर ईराक, टर्की, और सीरिया के घटनाक्रम पर भारत की रुचि है। वहीं ईरान के साथ चाबहार बन्दरगाह के विकास और रुस–ईरान–कतर के मध्य किये गये गैस और तेल समझौतों को व्यापक उत्तर–दक्षिण कोरिडोर योजना से भी संबंधित किया जा रहा है।

इसी क्षेत्र में अरब इजरायल संघर्ष में इजरायल से रक्षा समझौते तथा सउदी अरब तथा संयुक्त अरब अमीरात में निवेश के अवसर उत्पन्न करना भारतीय विदेश नीति की महत्वपूर्ण उपलब्धि है जिससे प. एशिया में चीन और पाकिस्तान को प्रतिसंतुलित करना भारत के लक्ष्यों में से एक हैं। इसी क्रम में मध्य एशियाई गणराज्यों के साथ भारत सामरिक और आर्थिक संबंध स्थापित कर रहा है जिससे रुस तथा मध्य एशिया के संबंधों में भारत स्वयं को शामिल करके इस क्षेत्र में भारत के लिये संभावनाओं के मार्ग बनाये रखें और अफगानिस्तान में व्यापक निवेश के माध्यम से एक बार फिर चीन–पाक गठबन्धन को प्रतिउत्तर दिया जा सके।

भारत की विदेश नीति में बहुआयामी कूटनीति का समावेश हुआ है और हिन्द महासागार, प्रशान्त क्षेत्र तथा द. चीन सागर में भारत ने विशेष रूझान दिखाया है जहां एक ओर श्रीलंका–सेशेल्स और मालदीव जैसे राष्ट्रों से संबंध स्थापित हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर इन क्षेत्रों में महासागरीय कूटनीत के उपायों में वृद्धि हुई है।

भारतीय विदेश–नीति में यूरोप अभी भी महत्वपूर्ण बना हुआ है कयोंकि 90 के दशक में यूरोपीय आर्थिक एकीकरण का परिणाम जिस यूरोपीय संघ के रूप में अस्तित्व में आया है उस में एक विविधता व्याप्त है और ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली जैसे राष्ट्रों से भारत के द्विपक्षीय संबंध जो तकनीकी और आर्थिक आधारों पर निर्मित है उनमें भारत प्रयत्नशील है भारत के आर्थिक–सुधार के लिये स्मार्ट सिटी, डिजीटल इण्डियन मेक–इन–इण्डिया, स्किल इण्डिया और स्टार्टप इण्डिया जैसे कार्यक्रम में यूरोपीय राष्ट्र विशेष रुचि दिखा रहे हैं। यद्यपि 2008 में यूरोपीय मौद्रिक संकट तथा 2016 में ब्रिटेन के यूरोपीय संघ से पृथक होने के कारण भारतीय व्यापारियों और उद्यमियों तथा IIT विशेषज्ञों को मुश्किलों का सामना करना पड़ा है लेकिन अभी भी यूरोपीय संघ के साथ व्यापार की अपार संभावनायें विद्यमान है।

इस प्रकार भारतीय विदेश नीत का समग्र मूल्यांकन विविध परिप्रेक्ष्यों में करने पर भारतीय विदेश नीति में निरन्तरता, स्थायीत्व और परिवर्तन के लक्षण देखे जा सकते हैं क्योंकि जहां एक ओर भारत स्वयं को एशिया के क्षेत्रीय–शक्ति–संतुलन में प्रभावशाली रूप से स्थापित कर रहा है वहीं दूसरी ओर वैश्विक मुद्दों यथा वैश्विक व्यापार के असंतुलन को समाप्त करना, और इसके लिये WTO के मंचों का उपयोग करना, वैश्विक जलवायु परिवर्तन पर संवेदनशील दृष्टिकोण प्रस्तुत करके पेरिस जलवायु सम्मेलन की क्रियान्विति पर प्रतिबद्धता, संयुक्त राष्ट्र संघ के सुधार के साथ–साथ सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति प्रतिबद्धता वैश्विक आतंकवाद का विरोध करते हुये मध्य एशिया और पश्चिम एशिया के आतंकवाद पर नियंत्रण के लिये समझौते करना और सहयोगात्मक क्षेत्रवाद की भावना का अनुसरण करते हुये, BRICKS, शंघाई सहयोग संगठन, G-20, और बिमस्टेक जैसे मंचों की मजबूत करना तथा नागरिक परमाणु समझौतों के साथ NSG, वासेनार ग्रुप, आस्ट्रेलिया समूह, से स्वयं को सक्रिया रूप से संबंद्ध करना इत्यादि नीतियों से भारतीय विदेश नीति वर्तमान और भविष्य के लिये एक सशक्त पहचान प्रस्तुत कर रही है।

परन्तु इन सब के बावजूद कुछ चुनौतियां और कमियां अभी भी विद्यमान है जैसे आसियान और यूरोपीय संघ के साथ व्यापार संतुलन का प्रतिकूल होना, अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के शक्ति समीकरणों में परम्परागत संबंधों और नवीन प्रवृत्तियों में संतुलन रख पाने में कठिनाई विशेषकर अमेरिका और रूस के साथ द्विपक्षीय संबंधों का संदर्भ, वैश्विक परिदृश्य पर चीन के मनोवैज्ञानिक दबाव को दूर कर पाने में कमी और द. एशिया में नेतृत्व की निर्विवाद भूमिका को संभालना जिसमें निकटवर्ती पड़ौस से मिल रही चुनौतियाँ, सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता का लम्बित होना, NSG में सदस्यता प्राप्ति की कठिनाईयाँ और वैश्विक आतंकवाद के मुद्दे पर विश्व के दृष्टिकोण को एकीकृत कर पाने की कठिनाईयाँ जैसे अनेक क्षेत्र विद्यमान हैं जहाँ भारत की विदेश नीति महत्वपूर्ण भूमिका से दूर है।

अतः उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि भारत की विदेश नीति बहुपक्षीय स्वरूप में संचालित होती है और 21वीं सदी में एशिया का मजबूत संदर्भ भारत से सशक्त विदेश को अपनाने की मांग अपेक्षित करता है ताकि भारतीय विदेश नीति आदर्शवादी मूलयों को धारण करते हुये भी राष्ट्रहित के सर्वोपरि मूल्य से सर्वाधिक सरोकर स्थापित कर सके।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत और महाशक्तियां

भारत–चीन

1. पड़ौसी का संदर्भ,
2. महाशक्तिजन्य प्रवृत्ति,
3. प्रारम्भिक सहयोग,
4. संघर्ष मूलक रूझान,
5. सहयोग और संघर्ष के मुद्दे।

भारत–चीन के संबंधों में निरन्तर उतार–चढ़ाव मौजूद रहे हैं। जिसका कारण दोनों देशों की अलग–अलग राजनैतिक प्रकृतियों, अलग सामाजिक दर्शन, नेतृत्व की भिन्न शैलियां और विदेश नीति के उद्देश्यों में भिन्नता है।

1 अक्टूबर, 1949 चीन में साम्यवादी क्रान्ति ने तत्कालीन शीतयुद्ध में सोवियत संघ और चीन मैत्री तथा अमेरिकी विरोध को बढ़ावा दिया और कोरिया संघर्ष से चीन ने वैश्विक मंच पर अपनी प्रभावी उपस्थिति दर्ज कराई। भारत ने भी 1950 में चीन को मान्यता देते हुये उसके साथ कूटनीतिक संबंध स्थापित किये। जिसके परिणाम स्वरूप 1954 में पंचशील समझौता और तिब्बत में चीन के प्रभाव को भारत द्वारा स्वीकार किया जाना शामिल है।

लेकिन 1960 तक, पहले तिब्बत में चीन के विरूद्ध बौद्ध विद्रोह और बौद्ध गुरु दलाई लामा का भारत में शरण लेना तथा उसके पश्चात् सीमा विवाद का परिणाम 1962 के भारत–चीन युद्ध, भारत की पराजय, चीन के द्वारा एक पक्षीय युद्ध विराम और भारत–चीन संबंधों में संघर्ष का कारण।

1962 के युद्ध में चीन द्वारा प्राप्त की गई विजय से जहां एशिया में चीन के वर्चस्व में बढ़ोतरी हुई वहीं सोवियत संघ तथा अमेरिका तक यह संदेश गया कि इस क्षेत्र में चीन की उपेक्षा आसान नहीं है। और इसलिये एशिया का शक्ति संतुलन जब भी निर्धारित होगा उसमें चीन निर्णायक भूमिका में होगा। क्योंकि भारत एशिया में चीन के समान नहीं है।

1960 के दशक से प्रारम्भ यह दृष्टिकोण, आज भी भारत–चीन संबंधों को प्रभावित करता है और दोनों के मध्य विभिन्न मुद्दों पर विवाद विद्यमान है।

1. एशिया में शक्ति संतुलन का संदर्भ,
2. चीन–पाक गुट का भारत संदर्भ,
3. सीमा–विवाद,
4. नदी जल विवाद,
5. अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भागीदारी,
6. भारत के विरूद्ध चीन का सामरिक गठबन्धन,
7. व्यापार संतुलन चीन के पक्ष में।

भारत–चीन संबंधों में सीमा रेखा का निर्धारण महत्वपूर्ण समस्या है क्योंकि ब्रिटिशकालीन सन्दर्भ जो 1914 में मैकमोहन रेखा का निर्धारण करता है और 1962 के युद्ध में चीन के जिन क्षेत्रों पर अधिकार किया है उसके कारण सिक्किम तथा अरूणाचल प्रदेश से लगता हुआ पूर्वी सेक्टर और कश्मीर में लद्दाख से लगता हुआ पश्चिम सेक्टर तथा वास्तविक नियन्त्रण रेखा (LOAC) विवादग्रस्त है। चीन अरूणाचल प्रदेश को तिब्बत का दक्षिणी भाग मानता है और इसलिये चीन के नक्शों में समय–समय पर अरूणाचल प्रदेश से छेड़छाड़ होती है और वहां के निवासियों की चीन वीजा प्रदान नहीं करता है। साथ ही इस क्षेत्र में चीन की अवैध गतिविधियाँ भी संचालित होती है।

1963 में पाक ने पाक अधिकृत कश्मीर का कुछ हिस्सा चीन को सौंप दिया जिस पर चीन ने काराकोरम ट्रेक का निर्माण किया और वर्तमान में 46 अरब डालर की लागत से इस क्षेत्र में चीन–पाक आर्थिक गलियारा निर्मित हो रहा है जिसमें चीन का भारत विरोध के साथ–साथ मध्य एशिया तथा पश्चिम एशिया तक चीन द्वारा अपनी प्रभुत्व शक्ति का विस्तार शामिल है।

तिब्बत में ब्रह्मपुत्र नदी पर चीन द्वारा किया जा रहा निर्माण जो उसकी ग्रैण्ड–बैण्ड परियोजना का हिस्सा है जिसमें शक्तिशाली तकनीक से ब्रह्मपुत्र नदी का जल मोड़ा जायेगा और चीन इसके आंकड़े भारत को उपलब्ध नहीं कराता है जिससे भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों में कृत्रिम जल संकट की आशंका है।

चीन के द्वारा हिन्द महासागर में अपनी स्थिति को ''स्टिंग ऑफ पर्ल्स'' मोतियों की माला रणनीति के अन्तर्गत दक्षिण एशिया से, दक्षिण–पूर्व एशिया तक बन्दरगाहों और आधारभूत संरचनाओं का निर्माण किया जा रहा है जिसका उद्देश्य भारत की घैराबन्दी भी है जिसमें पाक में ग्वादर, श्रीलंका में हंबन टोटा, बांग्लादेश में चटगांव, म्यान्मार में सितवे व थाइलैण्ड में मोरहे का विकास करके चीन इस क्षेत्र में अति सक्रिय हो गया है। इस मोतियों की माला रणनीति की मेरी टाइम सिल्क रूट (रेशम मार्ग) चीन की वन रोड–वन बैल्ट (OROB) रणनीति से जोड़ दिया गया है और जहां आर्थिक गलियारे से यूरोप व अफ्रीका समेत मध्य एशिया वहीं एशिया प्रशान्त क्षेत्र को घेरने के लिये दक्षिण चीन सागर और पूर्वी चीन सागर में चीन अपना प्रभुत्व जताता है जिससे भारत का विशेष ध्यान है क्योंकि भारत के समुद्री व्यापार का आधे से अधिक हिस्सा दक्षिण चीन सागर से और भारत की रणनीतिक सुरक्षा (सामरिक) हिन्द महासागर से परिभाषित होती है।

भारत–चीन संबंधों में भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों में माओवादी दर्शन पर आधारित अलगाववादी आन्दोलन प्रचलित है। जिससे भारत की आंतरिक सुरक्षा संवेदनशील हो गई है और इसके लिये चीन, बांग्लादेश–चाइना–इंडिया–म्यान्मार (BCIM) गलियारे और तिब्बत से नेपाल तक रेल्वे लाइन बिछाने का कार्य कर रहा है साथ ही इस क्षेत्र में पाक को भी प्रोत्साहित कर रहा है।

दोनों देशों के संबंधों में UN में भारत की स्थाई सदस्यता का चीन विरोध करता है साथ ही NSG में भारत की स्थायी सदस्यता को चीन ने रोक दिया है क्योंकि वह इसमें पाकिस्तान की भी भागीदारी चाहता है। पाक का भारी मात्रा में सैन्यकरण और श्रीलंका की सरकार को लिट्टे के विरूद्ध सैन्य गतिविधि संचालन करने के लिये भारी मात्रा में दी गई सैन्य सहायता से एशिया में शक्ति संघर्ष तीव्र हो गया है जिसमें चीन का रूझान भारत विरोध पर केन्द्रित है। इसलिये वह कश्मीर के निवासियों को स्टेपल वीजा प्रदान करता है। कश्मीर में मानवाधिकार हनन के मुद्दे को भारत विरोध में अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर उभारता है।

भारत–चीन संबंधों में व्यापारिक विषय भी समाहित हैं। चीन में 1980 के दशके से व्यापारिक/उदारीकरण का प्रारम्भ हुआ है और चीन विश्वभर में अपने उत्पादों का प्रचार–प्रसार करके आर्थिक नियंत्रण स्थापित करता है। भारत के संबंध में व्यापार संतुलन चीन के पक्ष में है और इसलिये राजनैतिक और कूटनीतिक विवाद के बावजूद भारत के लिये चीन के साथ संबंध बनाये रखना एक आवश्यकता है।

1993 में नरसिम्हाराव की चीन यात्रा और 2005 में वेन जियाबाव के समय आर्थिक संबंध तथा सामरिक और सहयोग साझेदारी का विकास हुआ। 2008 में दोनों देशों ने ''हाथ में हाथ'' संयुक्त सैन्याभ्यास किया। चीन के सहयोग से भारत को शंघाई कॉर्पोरेशन ऑर्गेनाईजेशन में सदस्यता प्राप्त हुई यद्यपि पाक को भी सदस्यता मिली। उस समय से भारत–चीन के मध्य आर्थिक सहयोग में अधिक प्रगति हुई। इस संबंध में भारत की मेक–इन इण्डिया तथा स्मार्ट सिटी जैसी परियोजना हेतु चीन से संबंधों में सुधार जारी है। परन्तु अभी भी इस दिशा में कुछ महत्वपूर्ण प्रयास किये जाने आवश्यक हैं–

1. **भारतीय विदेश नीति में चीन के मनोवैज्ञानिक दबाव को दूर करना होगा जो 1962 के युद्ध से निरन्तर बढ़ता गया है।**
2. **शीत युद्धोत्तर विश्व जिसमें अमेरिका और चीन समानान्तर अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित हुये हैं, भारत को चीन के साथ व्यापार करना अनिवार्यता है लेकिन भारत इस संबंध में अपनी आर्थिक नीतियों का पुनः निर्धारण करे और चीनी उत्पादों की तुलना में भारतीय उत्पादों को लोकप्रिय बनाने के लिये उनके निर्माण की लागत, और उनकी मार्केटिंग को महत्वपूर्ण बनायें।**
3. **भारत के दक्षिण पूर्व एशिया व दक्षिण एशिया में बढ़ते हुये प्रभाव के परिणाम स्वरूप जो चुनौती भारत को मिली है उसके लिये भारत को पहले–पड़ौस की नीति के सफल क्रियान्वयन के साथ लुक–ईस्ट पॉलिसी से एक्ट–ईस्ट पॉलिसी तक निरन्तर विस्तार करना है और इस दिशा में भारत आसियान आर्थिक समुदाय की स्थापना महत्वपूर्ण कदम है।**
4. **हिन्द महासागर में मोतियों की माला रणनीति को रोकने के लिये भारत को अपनी महासागरिय कूटनीति और पड़ौसी देशों के संरचनात्मक विकास में अधिक निवेश करना होगा।**
5. **दक्षिण पूर्व एशिया और प्रशान्त महासागरीय क्षेत्र में भारत को अपनी भूमिका का निरन्तर विस्तार करना होगा इसके लिये दक्षिण चीन सागर में वियतनाम, फिलीपिन्स, मलेशिया जैसे राष्ट्रों से जो चीन के साथ विवादग्रस्त हैं, भारत को संबंध बढ़ाने होंगे। इस दिशा में भारत के द्वारा इन देशों के साथ किये जा रहे सैन्य अभ्यास भी सहायक साबित होंगे।**

6. भारत के द्वारा ब्रॉडर एशिया रणनीति पर अधिक ध्यान दिया जाने की जरूरत है जो अमेरिका, भारत, जापान तथा आस्ट्रेलिया चतुष्कोण पर आधारित है।
7. भारत को अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर अपनी सदस्यता के लिये तथा आतंकवाद और ग्लोबल वार्मिंग जैसे मुद्दों पर, जिनमें चीन भी पीड़ित पक्ष है, अपनी भूमिका का विस्तार करना होगा। साथ ही आंतरिक सुरक्षा के विषय को मजबूत रखना होगा जिससे चीन का कोई भी प्रयास भारत को आंतरिक रूप से कमजोर ना करें और भारतीय विदेश नीति चीन के साथ संबंधों के लेकर सहज, सुरक्षित और प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर सकें।

GA
GEETANJALI ACADEMY

भारत–अमेरिका

समान हितों के मुद्दे :

1. **दोनों का लोकतांत्रिक राष्ट्र होना।**
2. **UN में दोनों की आस्था होना।**
3. **उदारीकृत अर्थव्यवस्था के समर्थक।**
4. **वैश्विक आतंकवाद पर एकसमान दृष्टिकोण।**
5. **UN में भारत की स्थायी सदस्यता।**
6. **चीन को प्रतिसंतुलित करना।**
7. **भारत के लिये परमाणु ऊर्जा की उपलब्धता।**

भारत–अमेरिका संबंधों का विश्लेषण करने से पूर्व शीतयुद्ध अमेरिका के वर्चस्व (प्रभुत्व) और अमेरिका के द्वारा अपनाई गई नीतियों का अध्ययन आवश्यक है।

अमेरिका, जिसने 19वीं सदी में एकान्तवाद की नीति का अनुसरण किया, यह अमेरिका 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में पैक्स अमेरिका की नीतियों का प्रतिपादन किया जिसका उद्देश्य है अमेरिकी प्रभुत्व और प्रभाव में बढ़ोतरी। इसके लिये USA में आर्थिक सहायता, पुनर्निर्माण सैनिक गठबन्धनों का निर्माण, तथा विभिन्न राष्ट्रों के साथ द्विपक्षीय संधियां सम्पन्न की। जिसके परिणामस्वरूप पश्चिम यूरोप और एशिया के लगभग सभी भागों तक USA अपना प्रभाव स्थापित कर पाने में सफल हुआ।

अमेरिकी वर्चस्व का यह शीतयुद्ध कालीन समय कूटनीतिक दृष्टिकोण से इसलिये भी महत्वपूर्ण है कि USA ने जहां एक ओर सोवियत संघ व साम्यवादी चीन को एक शक्ति में रूपान्तरित नहीं होने दिया वहीं दूसरी ओर सोवियत संघ का विघटन करवाकर विश्व को यह संदेश दिया कि अमेरिका ही विश्व की एकमात्र महाशक्ति है।

शीत युद्धोत्तर काल (1990 का दशक) में वैश्विक व्यवस्थाओं के रूपान्तरण और विश्व के एक ध्रुवीय से बहुध्रुवीय हो जाने की दशा में अमेरिका ने अपनी नीतियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये और जहां एक तरफ विश्व में बहुराष्ट्र निगमों और आर्थिक विकास का समर्थन किया वहीं एशिया के शक्ति संघर्ष में स्वयं को शामिल किया रखा। जिसके लिये दक्षिण एशिया में भारत और पाक, पूर्वी एशिया जापान व दक्षिण कोरिया, दक्षिण पूर्वी एशिया में आसियान देश और एशिया–प्रशान्त क्षेत्र (एपेक), मध्य पूर्व में खाड़ी देशों के संदर्भ में कुवैत संकट में सक्रिय भूमिका, ईराक में सक्रिय हस्तक्षेप, अरब इजराइल संकट में ईजराइल का पक्ष लेना, साथ ही पश्चिम एशिया में किसी भी प्रकार के आतंकवाद पर नियंत्रण के लिये सक्रिया भूमिका निभाना जैसे कार्यों से USA अपने प्रभाव को जहां एक ओर बढ़ रहा है वहीं दूसरी ओर चीन से लगातार मिल रही चुनौतियों पर एक प्रतिसंतुलन का निर्माण कर रहा है।

भारत–अमेरिका के संबंधों को द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अब तक दो भागों में विभाजित किया जाता है। शीतयुद्ध की अवधि में दोनों देशों के संबंध संघर्षमय रहे क्योंकि अमेरिका के दृष्टिकोण में भारत साम्यवाद की ओर झुका हुआ राष्ट्र था और अमेरिका का यह मानना था कि जो हमारे साथ नहीं वह हमारे विरोधियों के साथ है। इस दौर में अमेरिकी समर्पित सैन्य संघटनों का सदस्य बनने से भारत का इंकार, पुर्तगाल के विरूद्ध गोवा दमनदीप में की गई सैनिक कार्यवाही, 1956 में हंगरी विद्रोह और 1968 में चेकोस्लोवाकिया विद्रोह में भारत के द्वारा सोवियत हस्तक्षेप की निन्दा ना करना, भारत द्वारा परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर ना करना और परमाणु परीक्षण करना। यद्यपि इस दौर में अमेरिका द्वारा भारत को PL-480 खाद्यान सहायता दी गई लेकिन 1970 के दशक में भारत–सोवियत मैत्री ने अमेरिका–चीन–पाकिस्तान गठजोड़ का निर्माण किया।

1990 के दशक से जो वैश्विक परिवर्तन हुये उनमें न केवल अमेरिका एकमात्र महाशक्ति के रूप में बचा बल्कि उदारीकरण के रूप में अमेरिकी नीतियों की विजय हुई। भारत ने इस समय अपने कमजोर आर्थिक स्तर के कारण USA की ओर संबंध बढ़ाने शुरू किया ओर सर्वप्रथम लुक–ईस्ट पॉलिसी के माध्यम से आसियान देशों के साथ संबंध बनाने प्रारम्भ किये जिनके साथ अमेरिका का व्यापारिक हित जुड़े थे। लेकिन 1998 में परमाणु परीक्षण के कारण संबंधों में कटुता उत्पन्न हुई और अमेरिका ने भारत पर आर्थिक प्रतिबन्ध लगाये।

भारत अमेरिकी संबंधों में निर्णायक परिवर्तन वर्ष 2001 में देखा गया जब अमेरिका पर आतंकी हमले के कारण, अमेरिका द्वारा ''वार एगेन्स्ट टेरेरिज्म'' की घोषणा हुई। भारत ने सहयोग दिया। वर्ष 2001 से भारत अमेरिकी संबंधों में सहयोग के कुछ महत्वपूर्ण नये क्षेत्र देखे गये –

1. वैश्विक आतंकवाद का विरोध,
2. अफगानिस्तान का पुननिर्माण,
3. असैन्य परमाणु सहयोग,
4. आर्थिक और व्यापारिक संबंध,
5. आसूचना तन्त्र,
6. वैमानिकी,
7. ऊर्जा
8. साइबर सुरक्षा।

वर्ष 2004 में भारत और USA के मध्य एनएसएसपी (NSSP) सामरिक भागीदारी में अगला कदम सम्पन्न हुआ और 2005 में असैन्य परमाणु समझौता हस्तान्तरित हुआ। यह समझौता जो 2008 लागू और 2015 में इसके विवादों को सुलझाया गया, इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि NPT पर हस्ताक्षर किये बिना और NSG सदस्तया हासिल किये बिना भारत को परमाणु ईंधन की आपूर्ति होने लगी है।

वर्ष 2009 में ''सिंह–ओबामा ज्ञान पहल'' का प्रारम्भ हुआ जिसमें दोनों देशों ने शैक्षणिक क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने पर सहमति व्यक्त की है। 2014 में 29 सितम्बर को भारत–अमेरिका ने एक दृष्टिकोण पत्र प्रस्तुत किया है ''चले साथ–साथ'' जिसमें परमाणु समझौता रक्षा परियोजना, साइबर ऊर्जा तथा इन्फ्रास्ट्रक्चर पर बल दिया जा रहा है। इसी क्रम में 2015 में अमेरिकी राष्ट्रपति की भारत यात्रा के समय परमाणु–समझौता पर क्षतिपूर्ति और जवाबदेयता के निर्धारण पर सहमति बनी जिसमें 1500 करोड़ के इंश्योरेन्स पूल का प्रावधान किया गया और किसी भी परमाणु दुर्घटना की स्थिति में क्षतिपूर्ति का दायित्व, सेवा प्रदाता राष्ट्र का नहीं होगा। लेकिन साथ ही भारत के परमाणु संयंत्रों पर अमेरिका निगरानी नहीं कर सकेगा बल्कि निगरानी का कार्य अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण (IAEA) को सौंपा जायेगा।

वर्ष 2016 में दोनों देशों के मध्य ''लॉजिस्टिक एक्सचेंज मेमोरण्डम ऑफ एग्रीमेन्ट'' (LEMOA) सम्पन्न हुआ है जिसमें दोनों बिना किसी सैनिक गठबन्धन के आपस में रक्षा संबंधी समझौते, सैन्य आदान–प्रदान, संयुक्त अभ्यास और किसी आपदा की स्थिति में सैन्य उपयोग पर सहमत हुये हैं।

दोनों देशों के संबंधों में कुछ ऐसे मुद्दे हैं जिन पर व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है –

1. **भारत में कश्मीर मुद्दा और पाक प्रायोजित आतंकवाद पर अमेरिका का रवैया लचीला रहा है जिसका कारण दक्षिण एशिया में USA के लिये, पाकिस्तान का भू–सामरिक महत्व पहले अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप का विरोध करने और अब अफगानिस्तान तालिबानी आतंक का सफाया करने पर केन्द्रित है।**
2. **भारत का सुरक्षापरिषद् में स्थाई सदस्यता समेत NSG और वासेनार ग्रुप जैसे परमाणिक तथा निःशस्त्रीकरण के संगठनों का सदस्य बनाये जाने में USA की भूमिका को परिभाषित करने की आवश्यकता है तथा भारत को इस विषय पर USA से सकारात्मक समर्थन प्राप्त होना चाहिये।**
3. **2011 में USA द्वारा घोषित PIVOT ASIA POLICY एशिया धुरी नीति जिसके मूल में एशिया में अपना प्रभाव बढ़ाना है, भारत को अमेरिका के द्वारा पूर्वी एशिया और दक्षिण पूर्वी एशिया में अपना सम्पर्क बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है।**
4. **शीत युद्धोत्तर विश्व में जिस प्रकार के नये शक्ति संतुलन निर्मित हो रहे हैं उसमें चीन–पाकिस्तान–रूस त्रिकोण के प्रतिउत्तर में अमेरिका–भारत–जापान का महत्व बढ़ गया है और इसलिये भारत को एशिया–प्रशान्त में अमेरिकी सहयोग से अपनी शक्ति को सुदृढ़ करना होगा जिसके लिये एपेक संगठन और ट्रान्स पेसिफिक पार्टनरशिप जैसे मुक्त व्यापार क्षेत्रों की गतिविधियों पर भारत को कूटनीतिक दृष्टिकोण का परिचय देना होगा जिससे भारत अपने राष्ट्रहित को ध्यान में रखते हुये अमेरिका के साथ अपने संबंधों के इस स्वर्णिम दौर को लम्बे समय तक बनाये रख पाने में सफल साबित हो।**